चन्दामामा
माँ–बच्चों का मासिक पत्र
1st AUG.
6
as

Chandamama August '50 Photo by N. Ramakrishna

कोयलों में हीरा

चन्दामामा विषयसूची

इनके अलावा मन बहलाने वाली पहेलियाँ, सुन्दर रँगीले चित्र और भी अनेक प्रकार की विशेषताएँ हैं

चन्दामामा कार्यालय
पोस्ट बाक्स नं० १६८६
मद्रास-१

ग्राहकों को एक सूचना

चन्दामामा हर महीने पहली तारीख के पहले ही डाक में भेज दिया जाता है। इसलिए जिनको चन्दामामा न पहुँचा हो वे तुरंत डाक घर में पूछताछ करें और फिर हमें सूचित करें। १०-वीं तारीख के बाद हमें पहुँचने वाली शिकायतों पर कोई ध्यान न दिया जाएगा। कुछ लोग तीन-तीन महीने बाद हमें लिखते हैं। पत्र-व्यवहार में ग्राहक-संख्या का अवश्य उल्लेख करें।

व्यवस्थापक : 'चन्दामामा' :: पो. बा. नं. १६८६ :: मद्रास–१

चन्दामामा

माँ - बच्चों का मासिक पत्र

संचालक : चक्रपाणी

वर्ष १ | अगस्त १९५० | अङ्क १२

मुख–चित्र

गोकुल में कृष्ण पर दिन-दिन एक न एक संकट उपस्थित होने लगा। उसे मारने के लिए कंस नित नई चालें चलने लगा। पूतना और तृणावर्त्त वाली घटनाओं से गोकुल के सब लोग भय-भीत हो गए। आखिर एक बार बड़े-बूढ़ों ने एक जगह जमा होकर सोचा कि क्या करना चाहिए? तब एक बुद्धिमान व्यक्ति ने उठ खड़े होकर कहा—'भाइयो! इस गाँव में हमारे ऊपर नित नए संकट आते रहते हैं। इसलिए मेरा कहना है कि हम सभी कुछ दिन के लिए यह गाँव छोड़ दें। यहाँ से थोड़ी दूर पर वृन्दावन नाम का एक जंगल है। वह प्रदेश बहुत सुन्दर है। वहाँ हमें किसी चीज़ की कमी न होगी। हरे-भरे मैदानों में हमारे गाय-बैल सुख से पेट भर लेंगे। मैं चाहता हूँ कि हम सब लोग कुछ दिन तक वहाँ जाकर रहें।' उसकी बात सबको पसन्द आ गई। तुरन्त सारा गोकुल कूच की तैयारी करने लगा। औरतें, बच्चे-बूढ़े सब गाड़ियों पर चढ़े। सारा सामान गाड़ियों पर लादा गया। गोप लोग गायों-बैलों को हाँकते हुए बड़े आनन्द से वहाँ से रवाना होकर वृन्दावन की ओर चले।

वीर तुकाजी

वीर तुकाजी गया एक दिन
समर शत्रु से करने को;
धर्म - युद्ध में उन्हें मारने
या खुद ही लड़ मरने को!

किन्तु साथ की सारी सेना
तितर - बितर हो भाग गई।
वीर तुकाजी लौटा निज घर,
उसकी पूरी हार हुई।

उसका मुरझा बदन देख कर
सबने किस्सा जान लिया।
पत्नी चली गई आँगन से,
माता ने मुँह फेर लिया।

वीर तुका ने झुका लिया सिर,
फिर भी साफ सुना उसने-
माँ का कहना—'इस बुजदिल को
दूध पिलाया था किसने?'

लहू - लुहान शरीर लिए वह
गया स्नान करने सत्वर।
वहाँ खाट की आड़ देख कर
ठिठक रह गया इक पल भर।

' बैरागी '

इतने में पत्नी ने उसके
हाथों में चूड़ियाँ रखीं–
और कहा–'मिल गई मुझे तो
आज भाग से एक सखी!'

किसी तरह मन मार तुकाजी
लोहू की घूँटें पीकर,
स्नान-पान कर भोजन करने
आ बैठा निज आसन पर।

किन्तु वहाँ उसने क्या देखा–
फटा दूध रक्खा आगे।
पूछा तो उत्तर पाया'—जो
रिपु को पीठ दिखा भागे–

उसको फटा दूध ही काफी;'
सुन उसका लोहू खौला।
उठ कर तुरत गया रण करने
उलटे पाँव, कुछ न बोला।

तज कर वहाँ आप प्राणों की
जूझ अकेले रिपु-दल से—
वीर-स्वर्ग पाया उसने फिर,
रख ली लाज त्याग-बल से।

सुन्दरी यमुना

एक समय एक गाँव में सीनू नाम का एक लड़का रहता था। वह बड़ा ग़रीब था और देखने में भी खूबसूरत न था। फिर उसका मुँह कौन देखता? लेकिन उसमें एक गुण था। जब वह गाता तो उसके गले से अमृत की धारा बहने लगती। उसके पास एक सितार था। वही उसकी सारी जायदाद था। जब सीनू वह सितार बजाते हुए गाने लगता तो मोर, हिरन, साँप आदि सभी पशु-पक्षी उसका गाना सुनने आते।

लेकिन सीनू रुपया-पैसा या नाम कमाने के लिए नहीं गाता था। वह अपनी मौज में अपने मन के तराने गाया करता था। उसका सितार हमेशा उसके साथ रहता था। इसलिए उसका नाम ही 'सितार-वाला सीनू' पड़ गया।

लोग जब कभी सीनू का गाना सुनते तो उन पर जादू-सा चल जाता और वे पत्थर की तरह वैसे ही खड़े रह जाते! जब आख़िर सीनू गाना बन्द कर देता तो वे उसके पैरों पड़ कर गिड़गिड़ाने लगते।

लेकिन सीनू को यमुना के किनारे अकेले बैठ कर गाने में जितना आनन्द आता था उतना आनन्द और कहीं न आता था। यमुना की नीली लहरें देख कर वह मन्त्र-मुग्ध सा रह जाता। कभी-कभी वह सोचता कि इस यमुना से बढ़ कर सुन्दरी इन चौदहों भुवन में नहीं है।

एक दिन सीनू इसी तरह यमुना की शोभा देख कर आनन्दित होकर गा रहा था कि अचानक मँझधार के जल में एक भँवर पैदा हो गया और बड़े वेग से चक्कर खाने लगा। सीनू ने उसकी तरफ़ ग़ौर से देखा तो उसे उस भँवर के बीच से एक मुकुट वाला सिर बाहर निकलता दिखाई दिया। धीरे-धीरे एक देवता उठ कर बाहर आ खड़े हो गए। लहरें उनको देखते ही भय से

कृष्णदत्त

लोट-पोट कर अलग हो गईं और इस तरह उनके बाहर आने के लिए एक साफ़ सुथरी राह बन गई।

उस देवता ने सीनू के पास आकर कहा—"बेटा! मैं वरुण हूँ। संसार में जितनी भी नदियाँ हैं सब मेरी बेटियाँ हैं। मुझे तुम्हारा गाना सुन कर बहुत खुशी हुई। इसलिए तुम्हें कुछ-न-कुछ ईनाम देना चाहता हूँ। तुम कल एक जाल लाकर यमुना में फेंको। तुम्हें जो मिले वही मेरा ईनाम समझो। लेकिन एक बात याद रखो! ईनाम पाने के कुछ दिन बाद तुम्हें मेरे पाताल-राज में आकर वहाँ मणि-भवन में कुछ दिन रहना होगा और अपने अलौकिक गान से हमें आनन्दित करना होगा।" यह कह कर वरुण-देवता अदृश्य हो गए। उनके जाते ही फिर लहरें यथा-प्रकार उठने लगीं और नदी पहले की ही तरह बहने लगी।

दूसरे दिन सीनू ने एक जाल लाकर नदी में फेंका। उसने जब जाल बाहर निकाला तो उसमें एक संदूक मिला। उसने जब वह सन्दूक खोल कर देखा तो उसे उसमें अनगिनत हीरे-जवाहरात मिले। सीनू उन्हें घर ले गया और बेच-बाच कर उस रुपए से व्यापार करने लगा। कुछ ही दिनों में वह करोड़पति बन गया। अब उसका नाम सारे संसार में मशहूर हो गया।

इस तरह सीनू जब अचानक धनवान बन गया तो सब लोग उसके पास आने लगे और उसकी खुशामद करने लगे। लेकिन इससे सीनू में कोई परिवर्तन न आया। वह पहले की तरह ही यमुना किनारे बैठ कर सितार बजाते हुए अपने मन के राग आलापता। इतना ही नहीं; वह देश-विदेश से अनेक दुर्लभ रत्न और तरह-तरह के उपहार मँगा कर प्रेम से सुन्दरी यमुना की भेंट किया करता।

इस तरह बारह साल बीत गए। एक बार सीनू को किसी काम से एक जहाज के द्वारा विदेश की यात्रा करनी पड़ी। वह जहाज एक बड़े सौदागर का था। सीनू उसे कुछ रुपए देकर जहाज पर चढ़ा। सफ़र बहुत दूर का था। राह में बहुत दिन लग गए। सीनू का सितार तो उसके साथ था ही। बस, वह रोज जहाज पर बैठ कर सितार बजाते हुए कुछ-न-कुछ गाता रहता था। वह न तो किसी से बोलता-चालता और न किसी से मिलता-जुलता। इसलिए जहाज के सब लोगों को उससे बहुत ही चिढ़ पैदा हो गई।
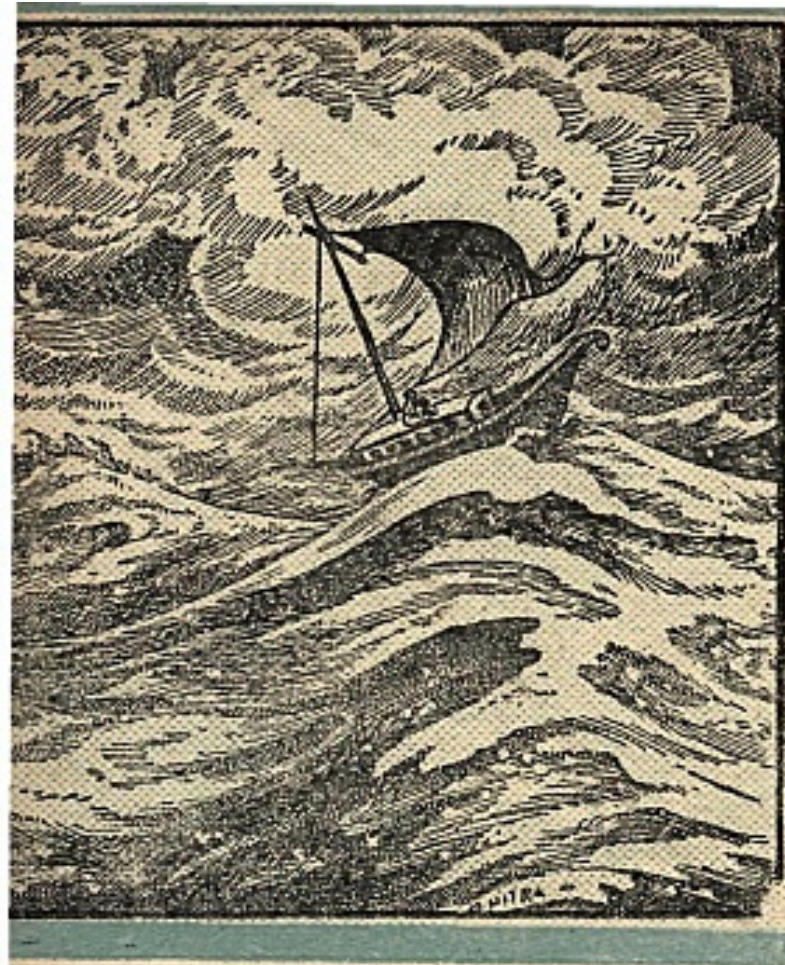
इस तरह जब जहाज बीच समुन्दर में पहुँचा तो एक दिन बड़ा भारी तूफ़ान उठा। जहाज भयानक लहरों पर डगमग-डगमग डोलने लगा। जहाज के खलासी, यात्री सभी घबरा गए। किसी की जान में जान न थी। लेकिन सीनू निश्चल होकर अपनी जगह पर बैठा-बैठा गा रहा था। तब जहाज के कप्तान ने जहाज पर के सब लोगों को एक जगह जमा करके कहा—"भाइयो! इस जहाज पर हमीं लोगों में कोई एक ऐसा व्यक्ति है जिसने वचन देकर उसका पालन नहीं किया है। उसी के अपराध से हमारा जहाज डूबने जा रहा है। नहीं तो वरुण-देवता को इतना क्रोध न आता। जब तक वह दोषी व्यक्ति अपने अपराध का दण्ड नहीं भोगेगा तब तक यह तूफ़ान शांत न होगा। इसलिए अच्छा हो कि वह स्वयं आगे आकर अपना अपराध स्वीकार कर ले। नहीं तो हम सब की हत्या का पाप भी उसी के मत्थे लगेगा।"

जब सीनू ने कप्तान की ये बातें सुनीं तो उसे वरुण-देवता से भेंट की बाद याद आ गई। उसने झट जान लिया कि उसी के अपराध के कारण जहाज डूबने जा रहा है। तुरन्त उसने आगे आकर कहा—"मैं ही वह पापी हूँ। मैंने ही वरुण देवता को वचन देकर उसे पूरा

नहीं किया है। लेकिन मैं अपने अपराध का दण्ड भोगने को तैयार हूँ।" यह कह कर वह अपना सितार हाथ में लिए जहाज पर से तूफ़ानी समुन्दर के अथाह जल में कूद पड़ा।

देखते ही देखते सीनू को लहरों ने निगल लिया। वह समुद्र के अथाह जल में तले की ओर जाने लगा। राह में उसे अनेक प्रकार के जलचर जीव-जन्तु दिखाई पड़े। उन सबको देख कर अचरज करते हुए थोड़ी देर में सीनू तले से जा लगा और सीधे वरुण-देवता के मन्दिर में जा पहुँचा। वैसा मन्दिर सीनू ने कभी स्वप्न में भी न देखा था। अनेक रंग-बिरंगे मणियों से बने हुए उस भवन को देख कर वह अवाक रह गया। इतने में वरुण-देवता ने उसे देख लिया और बड़े आनन्द से अगवानी करते हुए कहा—"क्यों बेटा! तुमने बिल्कुल मेरी बात ही भुला दी। जानते हो, तुम्हारी राह देखते हुए मैंने ये बारह बरस कितनी मुश्किल से काटे हैं? क्या तुम अपना वादा बिलकुल भूल गए थे?"

तब सीनू ने लाज से सिर झुका कर कहा—"देव! क्षमा कीजिए। मैंने अपने आनन्द में आपकी बात ही भुला दी थी!"

तब वरुण-देवता ने बड़े प्रेम से उसके कंधे पर हाथ रख कर दिलासा देते हुए कहा—"अच्छा! अब भी कोई हर्ज नहीं। जल्दी तुम अपना सितार निकाल कर अपने गान से अमृत बरसाओ।"

तब सीनू ने अपना सितार निकाला और गाना शुरू कर दिया। तुरंत समुद्र के गर्भ में खलबली मचने लगी। तरह-तरह के जलचर, अनेकों मछलियाँ, साँप और बहुत-से जीव वहाँ आ खड़े हो गए और सीनू का गाना सुनने लगे। वरुण-देवता भी अपने सिंहासन से उठ कर मस्ती से झूमते हुए नृत्य करने लगे। उनके नृत्य से जल की सतह पर फिर

तूफ़ानी लहरें उठने लगीं और जहाज डँवा-डोल होने लगे।

इतने में वरुण-देवता के अंतःपुर में से तीस सुन्दर कन्याएँ बाहर आकर खड़ी हो गईं। उनकी सुंदरता से वह सारा प्रदेश जगमगाने लगा। उन्हें देखते ही सीनू ने गाना बंद कर दिया और पागल की तरह उनकी तरफ़ देखने लगा। तब वरुण-देवता ने कहा—"बेटा! ये तीसों लड़कियाँ मेरी पुत्रियाँ हैं। इनमें से किसी का ब्याह नहीं हुआ है। तुम इनमें से जिसे चाहो चुन लो। मैं बड़ी खुशी से उससे तुम्हारा ब्याह करके तुम्हें अपना दामाद बना लूँगा।" तब सीनू ने उनकी तरफ़ देखा तो उसे तीसवीं लड़की सब से ज्यादा पसन्द आई। क्योंकि वह देखने में यमुना से मिलती-जुलती थी! उस का रंग भी यमुना की तरह ही गहरा नीला था। उसने उसे चुन लिया और कहा—"ऐसी सुंदरी तो सारे संसार में ढूँढ़ने पर भी कहीं नहीं मिल सकती।" यह सुन कर वह लड़की हँस दी। सीनू को ऐसा मालूम हुआ, मानो यमुना कल कल नाद करके बहती हुई जा रही हो।

थोड़ी देर बाद उसने और भी ग़ौर से देखा तो मालूम हुआ कि उसने देश-विदेश से मँगवा कर जो अमूल्य मणियाँ और रत्न यमुना की भेंट किए थे, वे सब उस लड़की के अंगों पर शोभा दे रहे थे। उसे अपनी आँखों पर विश्वास न हुआ। तब वरुण-देव ने मुसकुराते हुए उस कन्या का हाथ सीनू के हाथ में धर कर कहा—"तुम इतने दिनों से जिसे अपना मधुर गायन सुना रहे थे यही वह यमुना है। तुमने जो जो भेंटें चढ़ाईं थीं वे सब उसने पा लीं। इसलिए अब उचित है कि तुम दोनों विवाह करके सुख से रहो।" यह कह कर उन्होंने उन दोनों का विवाह बड़ी धूम-धाम से कर दिया और अपना आशीर्वाद दिया।

श्रीनगर से रवाना होकर जंगलों-पहाड़ों को पार करते हुए बालचन्द्र दिन भर चलता रहा। पचीस-तीस कोस चलने पर भी कहीं कोई गाँव न दिखाई दिया। इतने में अँधेरा हो गया। तब उसने कलेवे की पोटली खोल कर खा-पी लिया और एक बरगद के पेड़ के नीचे कंबल बिछा कर लेट रहा। जब सबेरा हुआ तो बालचन्द्र ने अपने सामने एक बारह फन-वाले सर्पराज को देखा। उसने तुरन्त तलवार उठाई। क्योंकि उसने समझा कि वह उसी को डसने के लिए आ रहा है।

लेकिन साँप ने उसे रोक कर कहा—'हे बालचन्द्र! तुम्हारी माँ मेरे ही वर के प्रसाद से पैदा हुई। इस नाते तुम मेरे पोते हो। मैं तुम्हें आशीर्वाद देने आया हूँ। जाओ, तुम ज़रूर अपनी माँ का उद्धार करोगे। तुम्हारे हाथों फकीर का संहार होगा। लेकिन होशियार! नगवाडीह के पास फकीर ने एक राक्षसी को पहरा देने के लिए रखा है। वह कपट-वेष में तुम्हें धोखा देने आएगी। देखना, कहीं उसके फंदे में न फँस जाना!'

यह सुन कर बालचन्द्र ने बड़ी नम्रता से सर्पराज को प्रणाम किया और वहाँ से चल दिया। इस तरह दिन भर चल कर वह शाम को बाघ-नगर में एक भठियारिन के घर पहुँचा। भठियारिन ने उसका मुरझाया हुआ चेहरा देख कर तुरन्त चूल्हा जलाया और रसोई बनाना शुरू कर दिया।

बालचन्द्र ने पूछा—'नानी, गाँव का हाल चाल तो बताओ!'

'क्या बताऊँ बेटा ! हमें मीठा पानी पिए हुए छः महीने हो गए।' उसने कहा।

'ऐसा क्यों, नानी ?'

'क्या करें बेटा! खारा पानी पीते हैं! रसोई भी उसी से बनाते हैं। दाल तो पकती ही नहीं।'

'क्या इस गाँव में मीठे पानी के कुएँ नहीं हैं ?'

'कुएँ तो हैं बेटा! लेकिन क्या फ़ायदा ? यह बाघ जो हमारे पीछे पड़ गया है ?'

'अच्छा तो यह बाघ कहाँ से आ गया ?'

'तो क्या तुम जानते ही नहीं ? हमारे गाँव के उत्तर में मीठे पानी का एक बहुत बड़ा कुआँ है। एक बड़ा बाघ न जाने कहां से आ गया और वहाँ जम कर बैठ गया। छः महीने से वह किसी को उस ओर ताकने भी नहीं देता। जो जाता है उसको हड़प जाता है। कोई भी उसे नहीं मार सका।'

'तो तुम्हारे राजा क्या कर रहे हैं ?'

'वे क्या करेंगे बेचारे ? उन्होंने ढिंढौरा पिटवा दिया है कि जो कोई उस बाघ को मारेगा उसे अपनी बेटी ब्याह दूँगा। उन्होंने तख्तों पर यही लिखवा कर सभी बाजारों में टँगवा दिया है। लेकिन उस बाघ को मारे कौन ?'

थोड़ी देर में बालचन्द्र खा-पीकर सो रहा। दूसरे दिन उसने तड़के ही उठ कर नहा-धोकर कलेवा किया और शहर के उत्तर की ओर चल पड़ा। वहाँ जाकर उसने देखा तो फाटक बन्द था और ताला लगा हुआ था। लेकिन पहरेदार वहीं थे। 'अरे भई, कौन है यहाँ ? जरा फाटक तो खोलो ! मुझे बाहर जाना है।' बालचन्द्र ने कहा।

'यह फाटक नहीं खुलेगा। तुम पूरबी दरवाजे से जाओ।' पहरेदारों ने कहा।

'नहीं; मुझे इसी दरवाजे से जाना है।'

'क्यों नाहक अपनी जान गँवाते हो? यहीं नजदीक में एक कुआँ है। वहाँ एक बाघ रहता है। उससे कोई नहीं बच सकता।' पहरेदारों ने कहा।

'अच्छा, जरा मैं भी एक बार देख लूँ कि वह कैसा बाघ है। दरवाजा खोलो।' बालचन्द्र ने कहा।

तब पहरेदारों ने दरवाजा खोल कर बालचन्द्र को बाहर जाने दिया और तुरन्त फिर बन्द कर लिया। बालचन्द्र बाघ को ढूँढ़ते हुए उस कुएँ पर पहुँचा। बाघ उसे देखते ही गरज कर टूट पड़ा। लेकिन बालचन्द्र ने उससे पहले ही तलवार का एक ऐसा वार किया कि बाघ लोट-पोट कर ठण्डा हो गया। तब उसने उसके पंजे और उसकी पूँछ का सिरा काट लिया और फिर पूरबी दरवाजे से होकर भठियारिन के घर लौट आया।

'कहाँ घूम आए हो बेटा?' भठियारिन ने पूछा।

'शहर देखने गया था। कैसा सुन्दर शहर है? मैं और कुछ दिन यहीं रहूँगा।' बालचन्द्र ने कहा।

उसी शहर में कलुआ नाम का एक धोबी रहता था। वह बड़ा आलसी और

कामचोर था। कभी कपड़े धोने नहीं जाता था। तिस पर शराब पीकर हमेशा नशे में चूर रहता था। उस दिन भी वह रोज़ की तरह खूब पीकर होश-हवास खो बैठा और भटकते हुए उस कुएँ के पास जा पहुँचा। वहाँ उसे मरा हुआ बाघ दिखाई दिया। नशे में होने के कारण उस धोबी को डर भी नहीं लगा। उसने लाठी उठा कर उस बाघ पर तीन चार हाथ जमा दिए। बाघ न हिला, न डुला। धोबी ने आँखें मल-मल कर देखा तो मालूम हुआ कि बाघ मरा है। उसने एक लात जमाई। लेकिन मरा हुआ बाघ कैसे हिलता? अब धोबी को निश्चय हो गया कि उसी के वारों से बाघ ठंडा पड़ गया है। तब वह खुशी से उछल पड़ा। उसने सोचा—'वाह! वाह! मैं अब राजकुमारी से ब्याह करूँगा और राजा का दामाद बनूँगा। बड़े-बड़े लोग आकर मेरे सामने सर झुकाएँगे और सलाम करेंगे।' यह सोच कर वह तुरन्त राज-महल की ओर दौड़ा।

राह में उसे देख कर सब लोग दाँतों तले उँगली दबाने लगे। कुछ लोगो ने उसे रोक कर पूछा—'अरे! बात क्या है? क्यों इस तरह दौड़ रहा है?' लेकिन उन सब को धक्का देकर वह राज-महल में पहुँचा।

'हुजूर! मैंने बाघ को मार डाला है। अगर आप चाहें तो कुएँ के पास जाकर उसकी लाश देख सकते हैं। अब आप जल्दी राजकुमारी से मेरा ब्याह कर दें!' उसने राजा के पास जाकर कहा।

राजा, मन्त्री वग़ैरह सभी को उसकी बातें सुन कर काठ मार गया। वे कैसे सोच सकते थे कि यह पियक्कड़ उस बाघ को मार डालेगा? अब राजकुमारी को इस धोबी के गले कैसे बाँधा जाए? नहीं तो फिर वादा जो तोड़ना पड़ेगा!

इधर भठियारिन के घर में थका-माँदा राजकुमार खा-पीकर तुरन्त सो गया। इतने में भठियारिन ने ढिंढोरा सुना कि कलुआ धोबी ने बाघ को मार डाला है। यह सुनते ही उसे शक हो गया कि हो न हो, राजकुमार का भी इसमें कुछ हाथ है। उसने चुपके से तलवार निकाल कर देखी। वह खून से सनी हुई थी। इतने में बाघ के पंजों की पोटली पर उसकी नज़र पड़ी। उसका शक ठीक निकला। तुरन्त भठियारिन वे पंजे और पूँछ का सिरा लेकर राजा के पास गई और उससे खुलासा हाल कह दिया। राजा को सारा हाल मालूम हो गया।

दरबारियों ने जाकर देखा तो बाघ सचमुच मरा पड़ा था। आख़िर लाचार होकर राजा ने घोषित करवा दिया कि 'कलुआ धोबी ने बाघ को मार डाला है। इसलिए राजकुमारी सुभद्रा से उसका ब्याह होगा।'

राज-महल में किसी के मुख पर कोई रौनक़ न थी। सारी खुशी तो कलुआ धोबी की थी। इस जोश में उसने अपनी धोबिन को खूब मारा-पीटा और बिरादरी-वालों को बुला कर खूब ताड़ी पिलाई। रात भर उसने अपने घर में जलसा मनाया।

दूसरे दिन तड़के ही राजा ने सिपाहियों को भेज कर धोबी को पकड़ मँगाया और हथकड़ी-बेड़ी लगा कर जेल में डाल दिया। राजा अपने परिवार सहित भठियारिन के घर आया और राजकमार को अपने साथ महल में ले जाकर खूब ख़ातिर की।

सुभद्रा के साथ ब्याह की तैयारियाँ होते देख कर राजकुमार ने कहा—'मैं अपनी माँ को फकीर की क़ैद से छुड़ाने जा रहा हूँ। इसलिए अभी मैं ब्याह नहीं कर सकता। हाँ, जब मैं अपनी माँ को साथ लेकर लौटूँगा

तो जरूर ब्याह करके सुभद्रा को अपने साथ ले जाऊँगा।' राजा ने भी उसकी बात मान ली और नागशर्मा नामक एक ब्राह्मण को साथ देकर उसे बिदा किया।

वहाँ से गंगा-नगर पचीस कोस की दूरी पर था। दोनों उस तरफ़ रवाना हुए। दोपहर तक चलते रहने के बाद बालचन्द्र को जोर की प्यास लगी। तब नागशर्मा राजकुमार को एक कुएँ के पास ले गया। कुआँ बहुत गहरा था। वहाँ पानी लेने के लिए कोई चीज़ न थी। तब बालचन्द्र ने अपने वस्त्र, गहने, हथियार सब उतार कर कुएँ की जगत पर रख दिए। फिर अपनी लम्बी पगड़ी का एक छोर पास के एक पेड़ से बाँध कर उसके सहारे वह कुएँ में उतरा। इतने में क़ीमती गहने और हथियार वग़ैरह देख कर उस ब्राह्मण के मन में लालच पैदा हुआ और उसकी नीयत बिगड़ गई। उसने झट तलवार उठाई और पेड़ से बँधी हुई पगड़ी को खट से काट डाला।

बालचन्द्र धड़ाम से कुएँ में जा गिरा। कुएँ की दीवारों पर काई जमी हुई थी। हाथ-पैर फिसल रहे थे। इसलिए कोशिश करने पर भी ऊपर न आ सका। इधर ब्राह्मण गहने वग़ैरह लेकर चंपत हो गया। गंगा-नगर जाकर उसने सबको बेच-बाच दिया और मौज उड़ाने लगा। लेकिन थोड़े दिनों में उसके सब रुपए ख़तम हो गए और वह नगर के देवालय के ईर्द-गिर्द भीख माँग कर पेट पालने लगा। बालचन्द्र कुछ दिनों तक उस कुएँ में पड़ा रहा। उस घने जंगल के गहरे कुएँ में से उसकी पुकार कौन सुनता? लेकिन संयोग से गंगा-नगर का राजा शिकार खेलते हुए पानी पीने को कुएँ पर आया। कुएँ में झाँकते ही आदमी को देख कर उसने तुरन्त रस्सी लटका दी।

रस्सी के सहारे बालचन्द्र ऊपर आ गया। उसने राजा को अपनी कहानी सुनाई।

ब्राह्मण की दुष्टता का सारा हाल-चाल सुन कर राजा को उस पर दया आ गई। उस राजा के भी एक खूबसूरत बेटी थी। बालचन्द्र का शील-स्वभाव देख कर राजा मुग्ध हो गया था। उसने मन में सोचा—'अगर यह लड़का मेरा दामाद हो जाए तो कितना अच्छा हो!' उसने यह इच्छा बालचन्द्र से कह दी।

बालचन्द्र ने कहा—'मेरा व्रत है कि अपनी माँ को फकीर की क़ैद से छुड़ाए बिना किसी तरह का सुख न भोगूँगा। इसलिए जब मैं अपनी माँ को छुड़ा कर लौटूँगा, तब मैं आपकी इच्छा पूरी करूँगा।' राजा ने बड़ी खुशी से उसकी बात मान ली।

दूसरे दिन सवेरे राजा बालचन्द्र को अपने साथ नगर का देवालय दिखाने ले गया। वहाँ भीख माँगते हुए अपने साथी ब्राह्मण को देख कर बालचन्द्र ने कहा—'नमस्ते नागशर्मा जी!' ब्राह्मण मुँह बाए रह गया। उसके बदन पर काटो तो खून नहीं। लेकिन राजकुमार ने उस पर तरस खाकर उसके सारे अपराध मुआ़फ दिए। राजा से कह कर उसको बहुत सा धन भी दान में दिलवा दिया।

दूसरे दिन बालचन्द्र उस राजा से विदा लेकर गंगा-नगर से चल पड़ा। दिन भर वह बिना कहीं आराम किए चलता रहा। तोता-नगर अभी चार कोस और दूर था। इतने में अन्धेरा हो गया। राजकुमार बहुत थक गया था। इसलिए वहीं एक टूटे-फूटे मन्दिर में लेट रहा। पेट में चूहे दौड़ रहे थे। इसलिए उसे नींद न आई। आधी रात होते होते पहले एक सियार और उसके पीछे एक बाघ वहाँ आकर बैठ गए। फिर दोनों में बातचीत होने लगी। बालचन्द्र उन दोनों की बातें सुनने लगा। [सशेष]

बिल्ली की हत्या

एक गाँव में एक लालाजी रहते थे। वे बड़े चालाक थे। उन्होंने अनेकों पाप करके सैकड़ों लोगों से छल-कपट करके बहुत-सा धन कमाया था। लेकिन यह नहीं कि वे अपने पापों के बारे में जानते न हों। वे खूब जानते थे कि उन्होंने बहुत से पाप किए हैं और दान-धर्म न करने से उन्हें सीधे नरक जाना होगा। लेकिन दान-धर्म करने में रुपया-पैसा खर्च होता है। मन्दिर बनवाना, तालाब या कुएँ खुदवाना, पेड़ लगवाना या ऐसे ही पुण्य-कार्य सभी पैसा खर्चे बिना तो होते नहीं। लेकिन पैसा खरचने में तो लालाजी की जान ही चली जाती थी। वे सोचते—'मैंने इतने पाप करके यह सारा धन कमाया है क्या इसी तरह खर्च कर देने के लिए?' इसलिए उन्होंने बिना पैसा खर्च किए मुफ्त में पुण्य कमाने का एक रास्ता ढूँढ निकाला। वे राह में पेड़, पत्थर, मन्दिर, देवता, गौ-ब्राह्मण जो भी दिखाई देते सबको सैकड़ों प्रणाम करते। प्रणाम करते-करते कमर भी दुख जाती थी। लेकिन बिना पैसे के पुण्य जो मिलता था।

हाँ, तो एक दिन ऐसा हुआ कि सेठानी जी दूध के बरतन पर ढक्कन रखना भूल गई। इतने में एक बिल्ली ने आकर मजे से दूध लपलपाना शुरू कर दिया। सेठजी ने जब यह देखा तो वे गुस्सा न रोक सके। उन्होंने बगल से एक अद्धैया उठा लिया और तान कर ऐसा फेंका कि बिल्ली तड़पी भी नहीं। चारों खाने चित्त हो गई।

लालाजी ने गुस्से में अद्धैया फेंक तो दिया था। पर उन्हें गुमान न था कि पत्थर उस पर पड़ेगा और बिल्ली मर जाएगी। अब अपने हाथों एक बिल्ली की हत्या देख कर उनके हाथ-पैर सूख गए। क्योंकि बिल्ली की हत्या कोई ऐसा-वैसा पाप तो था नहीं। न

निवारण राय

जाने, उन्हें कौन से नरक में जाना पड़ेगा? तिस पर कहते हैं कि यह पाप करने वाला अगले जन्म में कोढ़ी होकर पैदा होता है। उन्होंने सोचा कि यह पाप तो ऐसा नहीं है जो मुफ्त के प्रणामों से पिंड छोड़ दे। यह सोच कर उन्होंने पुरोहित जी से सलाह करने को बुला भेजा। पुरोहित जी से उन्होंने इस तरह बात छेड़ी जैसे वह और किसी की बात हो। 'पंडितजी! बिल्ली की हत्या तो बड़ा भारी पाप है न?'

'बिल्ली को मारने से ब्रह्म-हत्या का पाप लगता है।' पण्डितजी ने कहा।

'तो फिर इस पाप का प्रायश्चित्त क्या है?' लालाजी ने पूछा।

'जो बिल्ली मर गई है उसी के वजन की एक सोने की बिल्ली बनवा कर ब्राह्मण को दे देने से इस पाप का प्रायश्चित्त हो जाता है।' पण्डितजी ने जवाब दिया।

यह सुनते ही लालाजी के सिर पर मानों पहाड़ ही टूट पड़ा। उन्होंने सम्हल कर कहा—'लेकिन पण्डितजी! हर किसी में सोने की बिल्ली दान करने की सामर्थ्य नहीं होती। ऐसे लोग क्या करें?'

'ऐसे लोग चाँदी की बिल्ली दे सकते हैं।' पण्डितजी ने कहा।

'लेकिन जो लोग चाँदी की बिल्ली भी नहीं दे सकते? क्या उन लोगों के लिए कोई रास्ता ही नहीं है?' लालाजी ने पूछा।

'है क्यों नहीं? शास्त्रों में तो यजमान की सामर्थ्य के अनुसार दान बताया गया है। ऐसे लोग काँसे की या नहीं तो पीतल की ही बिल्ली दान कर सकते हैं।'

फिर भी लालाजी को सन्तोष न हुआ। 'लेकिन जिन लोगों की उतनी भी हैसियत न हो?' उन्होंने फिर पूछा।

'ऐसे लोगों को अन्नदान करने के सिवा कोई चारा नहीं है।' पण्डितजी ने कहा।

अन्नदान के माने एक आदमी की रसोई का सामान याने चावल, दाल, नोन-मिर्च,

घी-दही वग़ैरह देना है। कुल मिला कर एकाध रुपए से काम चल जाएगा। बस, लालाजी को यह जान कर बड़ी ख़ुशी हुई कि बिल्ली की हत्या जैसा भारी पाप सिर्फ़ एकाध रुपए के खर्च से उनके सिर से उतर जाता है। अब उन्होंने पण्डितजी से यह प्रगट कर दिया कि वे अब तक जिस पाप से छूटने के लिए सौदा कर रहे थे वास्तव में वह पाप उन्हीं ने किया था।

यह सुन कर पण्डितजी हक्के-बक्के रह गए। उन्होंने सोचा—'अरे! इसने तो बड़ा अच्छा चकमा दिया! यह तो आसानी से एक सोने की बिल्ली दे सकता है।' लेकिन आख़िर यह सोच कर पण्डितजी ने सन्तोष कर लिया कि जमाना अच्छा नहीं है और दान-पुण्य में लोगों की श्रद्धा भी नहीं रह गई है। वे प्रायश्चित्त कराने को तैयार हो गए।

उनके चले जाने के बाद लालाजी ने फिर एक बार सोचा तो उनका मन आगा-पीछा करने लगा। उन्होंने सोचा—'पैसे क्या पेड़ों में फलते हैं? एक बोरा आटा बेचना पड़ता है। तब कहीं आठ आने पैसे मिलते हैं। ऐसी पसीने की कमाई क्या फिजूल इस ब्राह्मण को दे दूँ?' उन्होंने दिमाग लड़ाया कि बिना एक पाई भी खर्च किए पाप से कैसे छुटकारा मिल सकता है? सोच-विचार करने के बाद
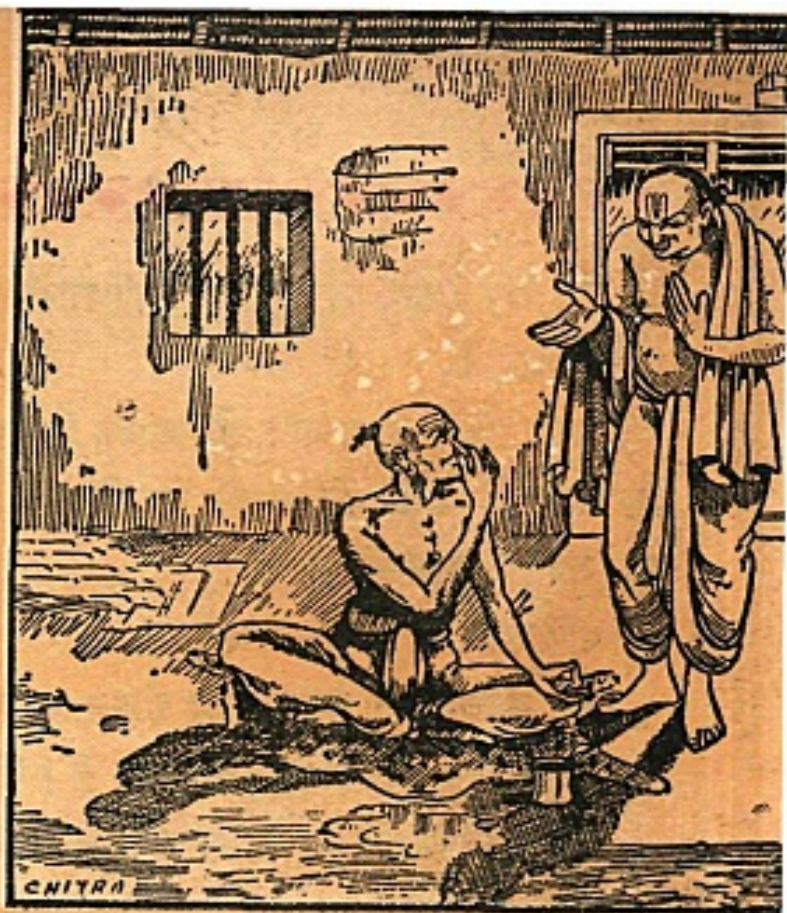
पण्डितजी के घर गए और जाकर फिर पूछा—'क्यों पण्डितजी! क्या सचमुच आपको अन्नदान देने से मेरा पाप कट जाएगा?'

'इसमें क्या शक है? तुम्हारा दान ग्रहण करते ही तुम्हारा पाप भी मेरे ऊपर आ जाएगा। मैं स्वयं जप-तप करके उससे छुटकारा पा लूँगा।' उन्होंने कहा।

'तब तो ठीक है। मैं अभी जरा काम से जा रहा हूँ। दान की वस्तुएँ मैं किसी के हाथ भिजवा दूँगा। आप तुरन्त जप शुरू कर दीजिए।' यह कह कर लालाजी घर चले गए। एक घण्टा बीत जाने के बाद लालाजी ने फिर आकर पूछा—'पण्डितजी! क्या कर रहे हैं?'

'मैं जप कर रहा हूँ।' पण्डितजी ने तुरंत जवाब दिया।

'मेरा किया हुआ पाप जो आपके सिर पर आ गया है उसी को काटने के लिए है न यह जप?' लालाजी ने पूछा।

पण्डितजी ने कहा—'हाँ!'

तब लालाजी ने बहुत खुश होकर पूछा—'क्या मेरा पाप आपके ऊपर आ गया है?'

बेचारे पण्डितजी न समझ सके कि लाला ये सब सवाल क्यों कर रहे हैं? उन्होंने सोचा—'नहीं कह देने से कहीं लालाजी दान देने से इन्कार न कर दें।' इसलिए उन्होंने कहा 'हाँ'।

'तो अब मैं चला। बिदा दीजिए!' यह कह कर लालाजी वहाँ से चले।

'तो मेरी दान-दक्षिणा कहाँ है?' पण्डितजी ने पूछा।

'दान-दक्षिणा? क्या करूँ पण्डितजी! व्यापार में बड़ा घाटा पड़ गया है। फिर कभी दे दूँगा।'

'अरे लालाजी! आप यह क्या कह रहे हैं? पहले आपने कहा था कि अभी भिजवा दूँगा।' पण्डितजी ने घबरा कर कहा।

'मैंने पहले कहा तो था! लेकिन क्या किया जाय? लाचार हूँ। समझ लीजिए कि हत्या का पाप आपके सर और वादा झूठा करने का पाप मेरे सिर!' यह कह कर लालाजी चलते बने। राह में लालाजी ने सोचा—'बिल्ली की हत्या का पाप बहुत बड़ा है। लेकिन दान न देने का पाप बहुत छोटा है। दो तीन बार भगवान को प्रणाम कर लेने से यह पाप छूट जाएगा।' यह सोच कर उन्होंने राह में एक मन्दिर में ठाकुरजी को दस-पन्द्रह बार प्रणाम कर लिया और मन ही मन खुश होते चले गए कि आज उन्होंने मुफ्त में एक बड़े भारी पाप से छुटकारा पा लिया। लेकिन लालाजी ने यह न सोचा कि बिल्ली की हत्या के पाप के साथ ग़रीब ब्राह्मण को धोखा देने का पाप भी उनके गले पड़ गया है।

एक समय की बात है। एक घने जंगल के बीच एक पहाड़ी गुफा में बैठ कर एक महात्मा कठोर तप कर रहे थे। वे ऐसे तपस्वी थे जिनको अपनी तपस्या छोड़ कर और किसी बात का ध्यान न था। स्वार्थ का लेश भी न था उनमें। हर वक्त परमार्थ का ध्यान करते-करते उनका जीवन ही परमार्थमय हो गया था। जो कोई उनकी शरण में जाता उसे वे बड़े प्रेम से ज्ञानोपदेश देते और उसके सारे दुख दूर कर देते।

उस जंगल के आस-पास के सैकड़ों गाँवों के लोग उस महात्मा के पास हर-हमेशा आया जाया करते और अपना दुःख-सुख कहते थे। छोटे-छोटे बच्चों से लेकर बड़े बूढ़ों तक सभी महात्मा से प्रेम करते थे। महात्मा सभी को उचित उपदेश देकर तृप्त करते रहते थे। इसलिए सबकी उस महात्मा पर बड़ी श्रद्धा और भक्ति थी।

जिस पहाड़ पर वे रहा करते थे उसके नीचे महात्मा ने चार चिह्न प्रतिष्ठित कर दिए थे। शंख, चक्र, गदा और पद्म यही वे चारों चिह्न थे। इन चारों चिह्नों की महिमा हमेशा लोगों को बताया करते थे। उनका कहना था कि जब तक उन लोगों का आचरण शुद्ध रहेगा, तब तक ये चारों चिह्न निर्मल तेज से जगमगाते रहेंगे। बच्चों से वे कहते—'बच्चो! हमेशा अच्छे काम किया करो। विनय सीखो और हमेशा सच बोलो।'

जवानों से कहते—'किसी से द्वेष न करो। द्वेष से क्रूरता उत्पन्न होती है। इसलिए सबसे प्रेम करो!'

बूढ़ों से कहते—'भाइयो! भगवान की इच्छा है कि मनुष्य शांति से जीवन बिताए। इसलिए मनुष्य को दूसरों से झगड़ा न करना चाहिए। जिन्दगी के चार दिन सबसे हिल-मिल कर बिताने चाहिए।'

रमेशकुमार

उस महात्मा के उपदेशों के प्रभाव से वहाँ आस-पास के सभी गाँवों में परम शांति विराजने लगी। लोग सुख से जीवन बिताने लगे। यह नहीं कि गाँवों के सब लोग देवता बन गए थे और कभी कोई ग़लती ही नहीं करते थे। वे ग़लतियाँ करते तो थे ? लेकिन उस महात्मा के उपदेश से उन्हें सुधार कर अपनी भूल जान जाते थे। इसके अलावा एक विशेषता यह थी कि जब वे लोग कोई गलती करते तो स्वयं महात्मा के पास आकर अपना अपराध स्वीकार कर लेते और पछताते हुए किए का दण्ड भी भोग लेते। इस तरह महात्मा के आस-पास के गाँवों के लोग अपना चाल-चलन दिन-दिन खूब सुधार रहे थे।

एक दिन ऐसा हुआ कि एक लड़की शरम से सर झुकाए धीरे-धीरे क़दम धरती आँसू भरें आँखों से महात्मा के पास आकर खड़ी हो गई। थोड़ी देर तक चुपचाप रहने के बाद उसने दीन-स्वर में कहा—' महात्मा ! मैंने आपके चारों चिह्नों में से चक्र को अपवित्र कर दिया है। मुझे क्षमा कीजिए।'

'तुमने उसे कैसे अपवित्र किया ?' महात्मा ने मुसकुराते हुए पूछा।

' महात्मा ! मेरे पड़ोस में एक लड़की रहती है। वह देखने में मुझसे भी सुन्दर है और मुझसे भी ज़्यादा क़ीमती गहने-कपड़े पहनती है। मुझे उस लड़की से डाह पैदा हो गया। इसलिए उस लड़की के बारे में मैंने झूठी-झूठी बातें फैला दीं। वे बातें सारे गाँव में फैल गईं और लोग उन पर विश्वास भी करने लगे। इसलिए वह लड़की बेचारी इतनी दुखी हो गई है कि लोक-लाज के मारे घर से बाहर भी नहीं निकलती।' उस लड़की ने सारा हाल सच-सच कह दिया।

महात्मा ने उस लड़की की बातें ग़ौर से सुनीं और कहा—'हाय बेटी! तुमने यह क्या किया? तुमने सिर्फ़ एक चक्र को ही नहीं; बाकी तीनों चिह्नों को भी अपवित्र कर दिया है।' यह कह कर वे उठे और उस लड़की को अपने साथ पहाड़ के नीचे लिवा ले गए जहाँ वे चारों चिह्न थे। उन चारों चिह्नों को मलिन देख कर उस लड़की के शोक का ठिकाना न रहा। व्याकुल होकर वह महात्मा के पैरों पर गिर पड़ी।

"बेटी! उठो! तुम अभी घर जाओ! कल सवेरे फिर मेरे पास आ जाना!" यह कह कर महात्मा ने उसे घर भेज दिया और खुद अपनी कुटिया में आ गए।

दूसरे दिन तड़के ही वह लड़की महात्मा के सामने हाथ बाँधे हाजिर हो गई। महात्मा की आज्ञा से आस-पास के गाँवों के सभी लोग वहाँ आकर जमा हो गए थे।

तब महात्मा ने उस लड़की को अपने साथ उन लोगों के पास ले जाकर उसके अपराध का सारा हाल उन्हें सुनाया। फिर उसने चिड़ियों के बहुत से पर निकाले और एक पर उस लड़की को देकर हवा में उड़ा देने के लिए कहा। लड़की ने उस पर को ज्यों ही उड़ाया तो वह उड़ते-उड़ते आँखों से ओझल हो गया। उसी तरह महात्मा ने सभी पर लड़की के हाथों देकर एक-एक कर सभी उड़वा दिए। यों सभी पर न जाने कहाँ-कहाँ उड़ गए। एक भी कहीं नजदीक में न गिरा। सभी आँखों से ओझल हो गए।

उसके बाद महात्मा ने वहाँ जमा हुए लोगों से कहा—'तुम सभी जाकर इस लड़की के उड़ाए हुए पर ढूँढ लाओ। मैं एक-एक पर के लिए एक-एक रुपया ईनाम में दूँगा।'

सब लोग ईनाम पाने के लालच से परों को ढुंढने चले गए। वे पहाड़ के नीचे जंगल में बहुत दूर तक ढूँढ़ते हुए गए। लेकिन दो-चार लोग ही ढूंढ़ कर कुछ पर ला सके। गिनने पर मालूम हुआ कि इतने लोगों के बीच कुल चार को ही पर मिले हैं।

तब महात्मा ने वे चारों पर दोषी लड़की के हाथ में देकर कहा—'बेटी! जाओ! तुमने जिस लड़की के बारे में झूठी अफवाहें उड़ाई थीं उसे ये पर ले जाकर दे दो और कहो कि 'मैंने जलन के मारे तुम्हारे चार अच्छे गुण चुरा लिए थे। मैं अब उन्हें लौटाने आई हूँ।' फिर वह लड़की जो कुछ कहे सो आकर मुझे बता देना!'

उस लड़की ने महात्मा के कहे अनुसार किया और उनके पास लौट कर कहा—'उसने कुछ नहीं कहा। सिर्फ़ वे पर लेकर हँसती हुई चुप हो रही।'

तब महात्मा ने कहा—'अच्छा! अब जाकर फिर से चारों चिह्नों को देख तो आओ!' तब वह लड़की उन लोगों के साथ पहाड़ से उतर कर गई और देखा तो चारों चिह्न अब पहले की तरह फिर तेज से जगमगा रहे थे। अब सब लोगों की समझ में आ गया कि महात्मा ने पहाड़ पर चिड़ियों के पर क्यों उड़वाए थे। उनका मतलब था कि झूठी अफवाहें फैलाना उतना ही आसान है जितना कि चिड़ियों के पर हवा में उड़ा देना। लेकिन उन अफवाहों का खण्डन करना उतना ही कठिन है जितना कि उड़े हुए परों को फिर से बटोर लाना। तब से उन लोगों में से किसी ने किसी पर झूठी अफवाहें नहीं उड़ाईं।
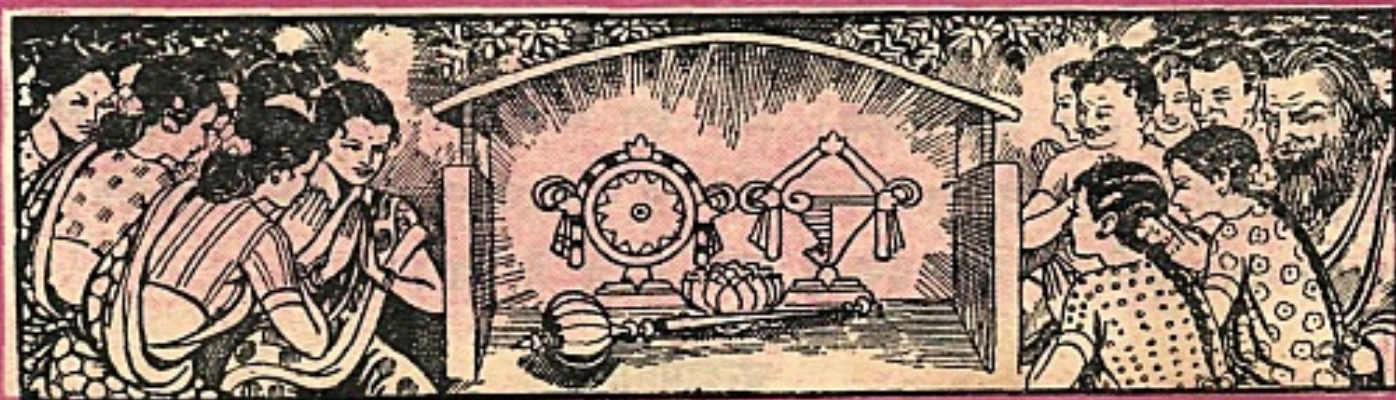
कहा जाता है कि किसी देश में दो भाई रहते थे। बड़ा भाई बड़ा कपटी और धूर्त था। लेकिन छोटा बिलकुल गऊ जैसा सीधा और भोला-भाला था।

बड़ा भाई अपने छल-कपट से दोनों हाथों रुपया बटोर कर कुछ ही दिनों में बड़ा भारी धनवान बन गया। उसने अपने रहने के लिए एक सुन्दर महल बनवा लिया। अपनी पत्नी के लिए नग-जड़े गहने बनवाए। अच्छे अच्छे कीमती कपड़े सिलवाए। वह अपने बाल-बच्चों के साथ ऐशो-आराम की जिन्दगी बिताने लगा। धनी आदमी को दोस्तों की क्या कमी! बहुत से लोग दिन-रात उसे घेरे रहने लगे। लक्ष्मी उसके घर में नाचने लगी। भट्टी की राख भी उसके छूने पर सोना बन जाती। जिस काम में वह हाथ डालता, उसी में उसको फ़ायदा होता।

लेकिन छोटे भाई का हाल ठीक उल्टा था। उसकी फ़सल टिड्डियाँ चाट गईं। महामारी से जानवर सब मर गए। सिर पर कर्ज़ का बोझ लद गया। उसका रुपया जिनके पास था, सब उसे हड़प गए। इस तरह उसके सिर पर विपदाओं का पहाड़ टूट पड़ा। नौबत यहाँ तक पहुँची कि घर में कानी कौड़ी भी न बची और बाल-बच्चे भूखों मरने लगे।

आख़िर उसकी पत्नी ने एक दिन उससे कहा—'आपके भाई राजा हैं। उनके पास जाकर अपनी कहानी कहिए। वे अपने छोटे भाई की जरूर कुछ-न-कुछ मदद करेंगे। संकट में किसी-न-किसी के आगे हाथ पसारना ही पड़ता है। और वे तो आपके सगे भाई हैं।'

छोटे भाई को यह पसन्द न था। लेकिन स्त्री के बहुत तंग करने पर

रामेश्वर गोयल

उसने सोचा—"अच्छा, चलूँ! एक बार उन्हें देख तो आऊँ। कुछ-न-कुछ मदद करेंगे ही।" यह सोच कर उसने बड़े भाई के घर जाकर अपनी राम-कहानी कह सुनाई। सब कुछ सुनने के बाद बड़े भाई ने कहा—"भाई! परसों मेरी बरस-गाँठ है। इसलिए तुम बहू और बच्चों को लेकर हमारे घर आ जाना।"

इस तरह उसने बड़े प्रेम से भाई को बुलाया। छोटा भाई खुश होता हुआ घर गया और अपनी स्त्री से सारी कहानी कह सुनाई। स्त्री बहुत खुश हुई। उन दोनों ने सोचा—'बरस-गाँठ के दिन भाई ज़रूर उन्हें ऐसी रक़म देंगे जिससे उनकी सारी ग़रीबी दूर हो जाएगी।' यह सोच कर दोनों फूले न समाए।

तीसरे दिन छोटा भाई अपनी पत्नी और बाल-बच्चों को साथ लेकर हवाई महल बनाता अपने बड़े भाई के घर पहुँचा। वहाँ जाकर उसने देखा कि भाई का सारा महल चहल-पहल से भरा हुआ है। दूर-दूर से लखपति, करोड़पति सब आए हुए थे। वे सब लम्बी क़तारों में कुर्सियों पर बैठे हुए थे। उनके आगे टेबुलों पर खाने-पीने की चीज़ें क़रीने से सजाई हुई थीं। वे लोग बड़ी देर से खा-पी रहे थे। सबके पेट भर गए थे। तोंदें मशक की तरह फूल रही थीं। डकार पर डकार आ रही थी। चेहरों पर सुरखी दौड़ रही थी। लेकिन उसके बड़े भाई अब भी घूम-फिर कर उनसे और ज़रा खाने का आग्रह कर रहे थे। वहाँ से हजारों आदमी खा-पीकर पान चबाते हुए उठे। नौकर-चाकर अब भी फुर्ती से इधर-उधर दौड़ रहे थे। लेकिन किसी ने छोटे भाई की तरफ़ आँख

उठा कर भी न देखा। वह अपने बाल-बच्चों सहित आँखें फाड़-फाड़ कर खाने की चीज़ों की तरफ़ देखता रहा। लेकिन किसी ने उसे खाने के लिए नहीं बुलाया।

दावत खतम होते ही कुछ लोगों ने उठ कर उसके बड़े भाई की उदारता और सज्जनता का बखान किया। कवियों ने उनकी प्रशंसा में कविताएँ पढ़ीं। उन्हें शिवि और दधीचि से भी बड़ा दानी बतलाया।

थोड़ी ही देर में दावत ख़तम हो गई। सब लोग बड़े भाई से विदा लेकर धीरे-धीरे अपने घर चले गए। लेकिन तब भी बड़े भाई ने अपने भाई से न बात ही की और न कुशल ही पूछी। वह अनदेखी करते हुए अन्दर चला गया। जैसे उसे अपने भाई के सपरिवार आने की कोई ख़बर ही न हो।

इस तरह अपमानित होने के बाद अब छोटे भाई का वहाँ रहने का मन न हुआ। वह बीबी-बच्चों के साथ भूखा-प्यासा, लाज की गठरी सर पर लाद कर घर लौट चला। राह में वह अपने भाई की प्रशंसा में पढ़ी
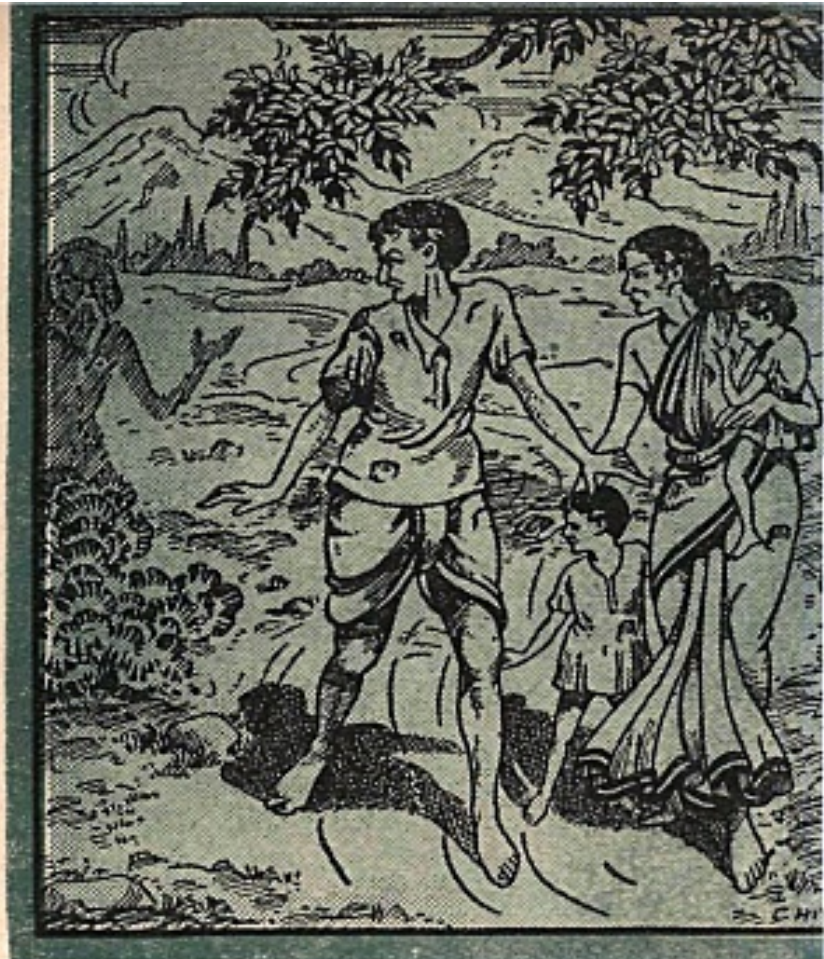
हुई एक कविता गुनगुनाते हुए चला। अचानक उसे ऐसा मालूम हुआ, मानों और कोई उसके साथ गला मिला कर वही कविता गुनगुना रहा है। उसने अपनी पत्नी से पूछा—'क्या! तुम भी वही कविता गुनगुना रही हो?'

'कहाँ? मैंने तो नहीं गुनगुनाया! अब मुझमें गाने का उल्लास नहीं रह गया है।' उसकी पत्नी ने उसे जवाब दिया। इतने में पीछे से किसी ने कहा—"तुम्हारे साथ गला मिला कर मैंने गाया था। मेरा नाम दरिद्र-नारायण है। मैं बहुत दिनों से देख रहा था कि मुझसे दोस्ती करने वाला

कौन मिलता है? आज मेरे भाग्य से तुम मिल गए। अब मैं तुम्हारा पिण्ड छोड़ने वाला नहीं। तुम मुझे भी अपने साथ ले चलो।"

दूसरे ही क्षण में एक बौना उसके सामने आ खड़ा हुआ। इस तरह छोटे भाई के साथ-साथ दरिद्र-नारायण भी उनके घर पहुँचा।

घर पहुँचने के बाद उसने छोटे भाई से कहा—"क्यों इस तरह मनहूस सूरत बनाए हो? चलो मेरे साथ! तुम्हें ऐसी शराब पिलाऊँगा कि सारे झगड़े-झंझट भूल जाओगे।"

"मेरे पास पैसा नहीं है।" छोटे भाई ने कहा।

"पैसा क्यों नहीं है? तुम्हारे बदन पर कुरता जो है? चलो, उसे बेच-बाच कर मौज उड़ाएँ।" यह कह कर बौना उसे अपने साथ ले गया।

इस तरह दरिद्र-नारायण की संगत में छोटे भाई ने रोज़ एक-एक करके घर की सारी चीज़ें बेच डालीं। रुपया-पैसा गल कर शराब में ढलने लगा। आख़िर उसकी पत्नी के बदन की दो फटी हुई साड़ियों के सिवा घर में कुछ न बच रहा।

तब बौने की सलाह से छोटे भाई ने पड़ोस के एक अमीर आदमी के पास जाकर कहा—"आप अपनी बैल-गाड़ी मुझे एक दिन के लिए दे दीजिए। एक ज़रूरी काम आ पड़ा है। मैं परसों अपने काम से लौट कर उसे आपके पास पहुँचा दूँगा।"

अमीर ने उसे अपनी बैल-गाड़ी दे दी। ज्यों ही वह गाड़ी ले आया त्यों ही बौने ने उससे पूछा—"भाई! यहाँ से पाँच कोस की दूरी पर पूरब की ओर ताड़ों के झुरमुट

के पास एक बड़ी काली चट्टान है; जानते हो न?"

'हाँ! हाँ! क्यों नहीं जानता? उस चट्टान को तो आस-पड़ोस के सभी गाँव-वाले जानते हैं।' उसने जवाब दिया। 'तो ले चलो गाड़ी तुरन्त वहाँ!' बौने ने कहा।

दोनों तुरन्त गाड़ी पर वहाँ गए। बौने के कहने से छोटे भाई ने उस काली चट्टान को हटाया तो उसके नीचे एक सुरंग दिखाई दी। उस सुरंग में थोड़ी दूर जाने पर उसे सोने की ईंटें, चमकते हुए हीरे-जवाहरात आदि ढेर-के-ढेर दिखाई दिए। बौने की ही सलाह से उसने सारा धन ढोकर गाड़ी पर लादना शुरू किया। लेकिन वह सब धन ढोकर बाहर ले जाना भी कोई आसान काम न था। देर होने लगी। उधर बौना जल्दी कर रहा था कि 'चलो, जल्दी करो! शराब-खाना बन्द करने का समय हो रहा है।'

आख़िर उसकी जिद से तंग आकर छोटे भाई ने सोचा—"इसी दुष्ट ने मुझे शराब की लत लगा दी है। अगर मैं अब भी नहीं चेता तो पीछे पछताने से कुछ भी फ़ायदा न होगा। पहले मुझे किसी तरह इस बला से पिण्ड छुड़ा लेना चाहिए।" यह सोच कर उसने एक उपाय ढूँढ़ निकाला और बौने से कहा—"भाई! मैं तो जहाँ तक हो सका सब कुछ ढोकर बाहर ले आया। लेकिन गाड़ी पर अब भी थोड़ी जगह बच रही है। अच्छा हो, तुम सुरंग में उतर कर एक बार चारों ओर देखो कि कहीं कुछ छूट तो नहीं गया है?"
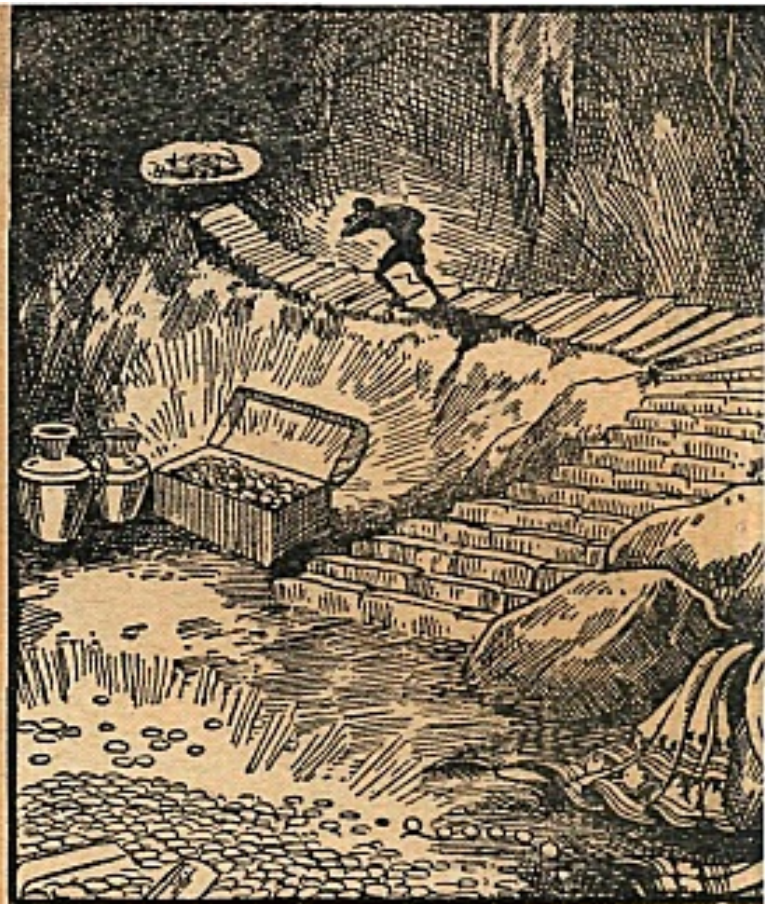
यह सुनते ही बौना सुरंग में उतरा। तुरन्त छोटे भाई ने अपना सारा ज़ोर लगा कर उस काली चट्टान को लुढ़काया और सुरंग का मुँह बन्द कर दिया। बौना लाचार होकर उस सुरंग में क़ैद हो गया।

अब छोटा भाई सोने की ईंटों और हीरे-जवाहरात से भरी गाड़ी लेकर घर लौटा। घर पहुँचते ही पहले उसने सब चीज़ें उतार कर गाड़ी उसके मालिक को लौटा दी। फिर उसने उस धन से एक सुन्दर महल बनवा लिया। पत्नी के लिए तरह-तरह के गहने बनवाए। अब वह बड़े ठाट-बाट से, अपने बड़े भाई से भी ज्यादा शान से जिन्दगी बिताने लगा।

कुछ दिनों बाद छोटे भाई की बरस-गाँठ का दिन आया। पहले तो उसके पास कभी पेट भर खाने के लिए भी न रहता था। इसलिए वह बरस-गाँठ क्या मनाता? लेकिन इस बार उसे किस चीज की कमी थी? इसलिए उसके मन में भी इच्छा पैदा हुई कि वह भी अपने बड़े भाई की ही तरह धूम-धाम से अपनी बरस-गाँठ मनाए।

दूसरे दिन जाकर वह अपने बड़े भाई को सपरिवार आने का निमन्त्रण दे आया।

बरस-गाँठ के दिन उसका बड़ा भाई सपरिवार आया। जब उसने अपने भाई के घर की राह पूछी तो लोगों ने उसे ले जाकर एक आलीशान महल के सामने खड़ा कर दिया। अपने भाई का ठट-बाट देखते ही बड़े भाई के पेट में खलबली मच गई कि यह अचानक इतना बड़ा अमीर कैसे बन गया!

उस दिन छोटे भाई के घर उस देश के राजे-महाराजे, अमीर-उमराव सभी दावत खाने आए। उन सबने जाते वक्त छोटे भाई की बड़ाई की और कहा कि ऐसी दावत उन्होंने अपनी जिन्दगी में कभी न खाई थी। बस, छोटे भाई का ही नाम सब की जबान पर था। यह सब देख-सुन कर बड़े भाई का मन ईर्ष्या से जलने लगा।

उसने साँझ तक किसी तरह सब्र किया और जब सभी पाहुने अपने अपने घर चले

गए तो उसने बड़ी उतावली से जाकर अपने भाई से पूछा—'भाई! तुमने यह सब दौलत कैसे पाई?' तब छोटे भाई ने अपनी सारी कहानी कह सुनाई। दरिद्र-नारायण से उसका परिचय होना, ताड़ों के पास जाकर काली चट्टान हटाना, सुरंग में धन मिलना आदि बातों में से उसने कुछ भी न छिपाया। यह सब सुनते ही बड़े भाई ने सोचा—'अच्छा बच्चू! अब मुझे सारा हाल मालूम हो गया। अब मैं देखूँगा कि तुम कितने दिन इस तरह अमीर बने रहते हो।' यह सोच कर वह भाई से विदा हो कर घर चला गया।

दूसरे दिन बड़ा भाई तड़के उठा और हाथ-मुँह धोकर दौड़ता-दौड़ता ताड़ों के झुरमुट की तरफ़ चला। उसके मन में एक तो यह आशा थी कि अब भी उस सुरंग में बहुत सा धन होगा। दूसरे वह बौने को क़ैद से छुड़ा कर अपने भाई से बदला लेना चाहता था। वहाँ जाकर उसने उस काली चट्टान को हटाने की कोशिश की। लेकिन चट्टान बहुत भारी थी। वह टस-से-मस न हुई।

दूसरी बार उसने पूरी ताक़त लगा कर चट्टान को थोड़ा सा हटाया। बौने ने जो अन्दर बहुत झल्लाया बैठा हुआ था तुरंत एक हाथ बाहर पसार कर उसका टेंटुआ पकड़ लिया।

अब बड़े भाई को लेने के देने पड़ गए। जब दम घुटने लगा तो उसने चिल्ला कर कहा—'अरे भाई! तुम नाहक मेरी जान क्यों लेते हो? मैं तो तुम्हें इस क़ैद से छुड़ाने आया था। तुम्हें इस सुरंग में मैंने नहीं, मेरे भाई ने बन्द कर दिया था। तुम शायद भ्रम में पड़ गये हो! मेरी जान जा रही है। मुझे छोड़ दो!'

लेकिन बौना काहे को सुनता? उसने कहा—"धोखेबाज कहीं का! एक बार चकमा देकर चला गया तो क्या समझ

लिया कि हर बार इसी तरह आँखों में धूल झोंक सकेगा? क्यों अब मालूम हो गया न आटे दाल का भाव?"

तब बड़े भाई ने गिड़गिड़ा कर कहा—"दरिद्र-नारायण! मुझे छोड़ दो! मैं तुम्हारे पाँव पड़ता हूँ। मैंने तुमको धोखा नहीं दिया था! मैं तो तुम्हें इस कैद से छुड़ाने आया था!" आख़िर इस तरह बहुत बिनती-चिरौरी करने के बाद बौने ने उसे छोड़ कर कहा—"अच्छा! तो अब मुझे अपने कंधे पर चढ़ा कर घर ले चलो!" बेचारा बड़ा भाई क्या करता? उसे अपने कंधे पर ढोता हुआ घर ले गया।

दरिद्र-नारायण ने ज्यों ही उसके घर में क़दम रखा त्यों ही उसके प्रभाव से बड़े भाई की सारी दौलत जहाँ-की-तहाँ ग़ायब हो गई। वह सब तरह की बुरी लतों का शिकार हो गया। आख़िर भीख माँगने तक की नौबत आ पहुँची। फिर भी उससे पिण्ड छुड़ाने का कोई रास्ता न दीख पड़ा। आख़िर बड़े भाई ने एक दिन किसी बहाने से बौने को एक सन्दूक में उतार दिया और तुरन्त ढकना बंद करके ताला भी लगा दिया। फिर वह उस सन्दूक को ढोकर बहुत दूर एक नदी में फेंक आया। वह सन्दूक नदी में बहता हुआ आख़िर समुन्दर में जाकर मिल गया। अगर उस सन्दूक को उसी तरह समुन्दर में रहने दिया जाता तो क्या ही अच्छा होता? दरिद्र-नारायण समुन्दर में आराम करते रहते और संसार चैन की बंशी बजाता। लेकिन दुर्भाग्य से ऐसा नहीं हो पाया। किसी लोभीराम ने उसे जल में तैरते हुए देख लिया और बाहर लाकर खोल डाला। बस, दरिद्र-नारायण ने फिर पृथ्वी पर विहार करना शुरू किया। तब से वे आज तक किसी न किसी के सर पर सवार हो ही जाते हैं।
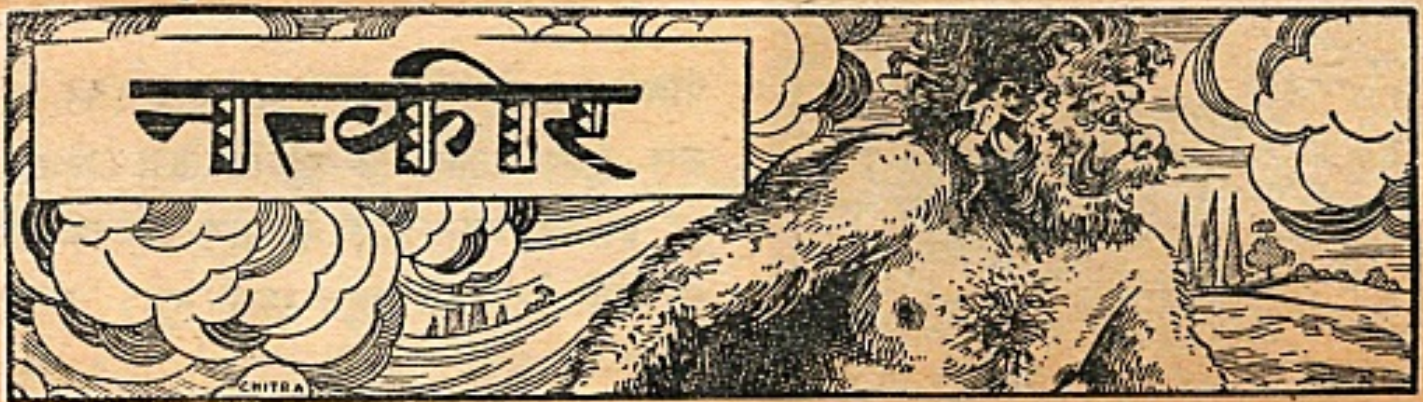
एक जंगल था। उस जंगल में एक बड़ा सरोवर और उसके किनारे एक बड़ा पुराना बरगद का पेड़ था। एक दिन एक कोढ़ी उस राह से निकला और अपनी थकान मिटाने के लिए उस बरगद के पेड़ की छाँह में बैठ गया। वह बैठे-बैठे सरोवर की ओर देख रहा था कि इतने में बरगद की एक पत्ती झड़ कर सरोवर के पानी में गिरी। जल छूते ही वह पत्ती एक मछली के रूप में बदल कर पानी में डूब गई।

यह देख कर वह कोढ़ी अचरज में पड़ गया। इतने में एक और पत्ती झड़ कर किनारे की धूल में गिरी। तुरन्त वह पत्ती एक चिड़िया बन कर फुर्र से आसमान में उड़ गई। यह देख कर कोढ़ी का अचरज और भी बढ़ गया।

इतने में एक और पत्ती झड़ी। इस बार वह पत्ती आधी पानी में और आधी कीचड़ में गिरी। जो हिस्सा पानी में गिरा था वह मछली बन गया और कीचड़ में का हिस्सा एक चिड़िया। मछली वाला हिस्सा पानी में डूबने की कोशिश कर रहा था तो पंछी वाला आसमान में उड़ने की। कोढ़ी यह देख कर खड़ा हो गया और देखने लगा कि अब क्या होता है?

इतने में वह पत्ती अचानक एक भूत बन गई। उस भूत के सर के बाल बबूल के काँटों की तरह खड़े थे। उसकी आँखें अंगारों की तरह दहक रही थीं। उसकी तोंद गजों बाहर निकली हुई थी। उसके भयङ्कर दाँत चमक रहे थे। उस भूत ने थर-थर काँपने वाले कोढ़ी को उठा कर अपने कंधे पर रख लिया और दौड़ पड़ा।

दौड़ते-दौड़ते वह बहुत दूर निकल गया और एक गुफ़ा के नज़दीक जाकर रुका। उस गुफ़ा के द्वार पर एक बड़ी भारी चट्टान

हरिकिशन

पड़ी थी। भूत उस चट्टान को आसानी से ढकेल कर अन्दर घुस गया।

भीतर जाने के बाद उसने कोढ़ी को कंधे पर से नीचे पटक दिया और पहले के लोगों को फिर से एक बार गिन लिया। कोढ़ी के साथ कुल एक सौ आदमी थे।

भूत की खुशी का ठिकाना न रहा। वह उछलने-कूदने और नाचने लगा। बात यह थी कि भूत सौ आदमियों को जमा करके एक बार खा जाता था। एक-एक करके खाने से उसका मन बिलकुल न भरता था। इसलिए सौ तक गिनने के बाद वह सबको एक ही बार चट कर जाता और उस पोखर का पानी पीकर मस्त हो जाता। फिर वह कुछ दिन तक उस गुफ़ा में चैन से खुर्राटे लेता रहता।

इसलिए आज कोढ़ी के साथ सौ आदमी पूरे होते देख उसे बहुत खुशी हुई। उसने सोचा—'चलो! पहले नहा-धो लूँ। फिर आराम से बैठ कर पेट-पूजा करेंगे।' यह सोच कर वह नहाने चला गया। भूत के जाते ही वहाँ जितने लोग थे सबने कोढ़ी को घेर लिया और रोते हुए कहा—'भाई! आज हमारी आयु पूरी हो गई! तुम हमारी माला के सुमेर हो!' 'तो क्या इस भूत को मार डालने का कोई उपाय नहीं है?' कोढ़ी ने पूछा। 'इस भूत को तो शिवजी जैसे कोई देवता ही मार सकते हैं। मनुष्य इसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता।' उन्होंने जवाब दिया। 'मैं शिवजी की प्रार्थना तो कर सकता हूँ। लेकिन मुझे विश्वास नहीं कि मेरी प्रार्थना पर वे कोई ध्यान देंगे। वे मुझसे बहुत नाराज़ हैं।' उस कोढ़ी ने कहा। 'क्यों? तुमसे वे नाराज क्यों हैं?' उनमें से किसी ने पूछा। कोढ़ी ने कहा—'अगर मैं अभी वह सब कहानी सुनाने लगूँ, तो भूत आ जाएगा और हम सबको हड़प जाएगा। इसलिए आओ, पहले भूत को

मारने का उपाय सोचें। उसके मर जाने के बाद तुम जितनी चाहोगे उतनी कहानियाँ सुनाता रहूँगा।'

यह कह कर उस कोढ़ी ने आँखें बन्द करके शिवजी के पुत्र श्री कार्तिकेय का ध्यान किया। ध्यान करते ही छः मुँह वाले वे देवता आकाश से उतरे और उस कोढ़ी के पास जाकर बोले—'तुम क्या चाहते हो?"

इतने में नहा-धोकर भूत भी वापस आ गया। कोढ़ी ने भूत की ओर उँगली उठा कर कहा—'भगवान! इस भयङ्कर भूत से हमारी रक्षा कीजिए।'

यह सुनते ही कार्तिकेय ने तलवार के एक ही वार से उस आदम-खोर भूत को खतम कर दिया। भूत को मार कर षड़ानन ने उस कोढ़ी से कहा—'सूरत-शकल से तुम बड़े भारी पण्डित और कवि मालूम होते हो! तुम को यह कोढ़ कहाँ से आ गया?' तब कोढी ने जवाब दिया—'भगवान! आपके पिता के शाप से ही मेरी यह हालत हुई!'

यह सुनते ही सबने एक-कण्ठ से कहा—'अच्छा! यह भूत तो मर गया।
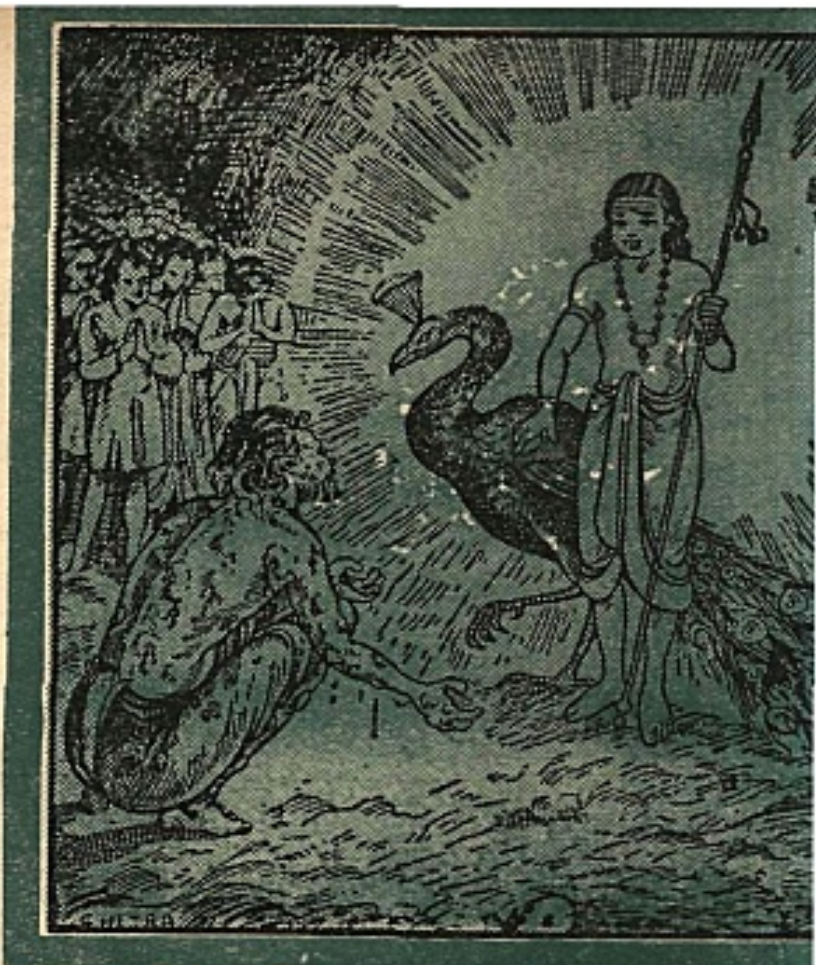
अब हमें अपनी कहानी सुनाओ न!' तब भगवान कार्तिक के सामने कोढ़ी अपनी कहानी यों सुनाने लगा—

'मैं दक्षिण भारत के पाण्ड्य-देश का रहने वाला हूँ। मेरा नाम नत्कीर है। पाण्ड्य देश की राजधानी मदुरा है। मदुरा के राज-दरबार में एक रत्नों से जड़ा हुआ सिंहासन है। कहा जाता है कि ऋषि अगस्त्य ने वह सिंहासन पाण्ड्य वंश के राजाओं को उस देश के सर्वश्रेष्ठ कवियों के बैठने के लिए दिया। वह सिंहासन देखने में बहुत छोटा है। लेकिन उसमें विशेषता यह है कि श्रेष्ठ-कवियों के आने से
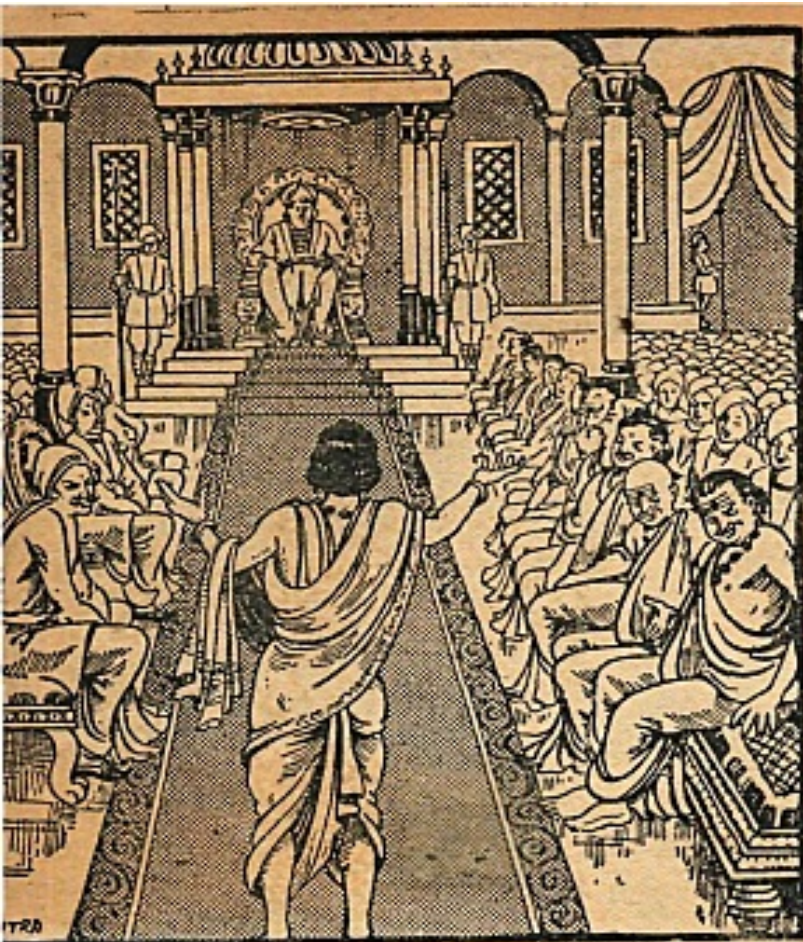
वह अपने आप बड़ा बन जाता है और सब को बैठने की जगह दे देता है।

मैं जब पाण्ड्य-राज के दरबार में आश्रय लेने गया तब तक ग्यारह महाकवि उस सिंहासन पर बैठ चुके थे। मैंने भी अपनी कविता से सब को मुग्ध कर दिया। इसलिए उस सिंहासन ने मुझे भी बैठने की जगह दे दी। इस तरह उस पर बैठने वाले हम बारह कवि हो गए। मेरे बाद भी बहुत से कवियों ने आकर उस दरबार में अपनी कविता सुनाई। लेकिन उस सिंहासन ने उनमें से किसी को स्थान न दिया। तो भी राजा उन कवियों को खाली हाथ लौटाना नहीं चाहता था। इसलिए हम बारहों महा-कवियों से उनकी परीक्षा करा कर हमारी सलाह के अनुसार उन्हें पुरस्कार दिया करता था। लेकिन धीरे-धीरे नए कवियों का उस दरबार में आना बंद हो गया। क्योंकि वे सभी हमसे डरते थे। इस तरह हम बारहों का घमण्ड धीरे-धीरे बहुत बढ़ गया। ख़ास कर मेरी नज़र तो ज़मीन पर पड़ती ही न थी।

एक दिन एक कवि ने उस दरबार में आकर एक श्लोक पढ़ा। उस श्लोक का भावार्थ यह था कि 'एक स्त्री के केशों से एक तरह की स्वाभाविक सुगन्ध निकलती है।'

तब मैंने उठ कर उस बेचारे की खिल्ली उड़ाते हुए कहा—'अरे कविजी! यह कहाँ की कविता है? कहीं स्त्री के केशों में भी स्वाभाविक सुगन्ध होती है? शायद आप को भ्रम हो गया होगा या नहीं तो उसने कोई सुगन्धित तेल लगा लिया होगा!' तब वह कवि बेचारा शरम से सर झुका कर बाहर चला गया।

वहाँ सब लोग मेरी तारीफ़ करने लगे कि 'वाह! वाह! कैसा लथेड़ा कविजी को?' इतने में उसी कवि का हाथ पकड़

कर और एक व्यक्ति बड़े क्रोध से दरबार में आया और गरज कर बोला—"यह मेरा प्यारा भक्त है। बेचारा ग़रीबी से तंग आ गया। इसलिए मैंने इसे एक श्लोक लिख कर दिया और कहा कि जाओ, राज-दरबार में इसे पढ़ कर ईनाम ले लो। लेकिन मैंने सुना कि दरबार में आकर श्लोक पढ़ने पर उसमें किसी ने ग़लती दिखाई थी। क्या मैं पूछ सकता हूँ कि वह पण्डित कौन हैं?" तब मैंने अकड़ते हुए उठ खड़े होकर कहा—'मैंने ही उस श्लोक पर आक्षेप किया था। क्या यह सच है कि स्त्री के केशों में भी कोई स्वाभाविक सुगन्ध होती है?'

तब उस व्यक्ति ने जवाब दिया—'हाँ, एक स्त्री के केशों में से ऐसी स्वाभाविक सुगन्ध आती है। शायद तुम नहीं जानते हो। मेरी स्त्री पार्वती के केशों में ऐसी स्वाभाविक सुगन्ध है। जिस विषय में तुम्हारा प्रवेश नहीं उसमें दखल देना बुद्धिमानी का लक्षण नहीं।' उस व्यक्ति ने यह कहते हुए अपना शिव-स्वरूप दिखाया। दरबार में हलचल मच गई। सब लोग 'महादेव! महादेव!' कहते हुए उठ खड़े हुए। मेरे साथी ग्यारहों कवि सिंहासन से उठ कर 'वन्दे शम्भुम् उमापतिम्' कह कर शिवजी का स्तोत्र करने लगे। लेकिन मैं कुछ भी विचलित न हुआ। जब वाद-विवाद उठ खड़ा हो जाए तो हमें अपने पक्ष का समर्थन करना चाहिए। विपक्ष में चाहे देवता ही क्यों न हों, घबरा नहीं जाना चाहिए। इसलिए मैं अपनी ज़िद पर अड़ा रहा। तब शिवजी को क्रोध आ गया और उन्होंने मुझे शाप दे दिया—'तुमने दूसरों पर आक्षेप किया। इसलिए तुम कोढ़ी बन जाओ।'

अब तो मेरी सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई। मैंने उनके पैरों पर पड़ कर क्षमा माँगी। तब आशु-तोष शंकर ने मुझ

पर तरस खा कर कहा—'अच्छा! जाओ! जब तुम कैलास पहाड़ के दर्शन कर लोगे तो यह शाप छूट जाएगा। लेकिन एक बात याद रखना। कभी किसी की कविता में ग़लतियाँ न ढूँढना। जो कुछ अच्छाई हो उसी की प्रशंसा करना।' इस तरह मेरा गर्व चूर-चूर करके शिवजी अन्तर्धान हो गए। मैं वहाँ से तुरन्त कैलास के दर्शन करने चला। राह में इस भूत के पंजे में फँस गया।' यह कह कर उस कोढ़ी ने अपनी कहानी ख़तम की। तब पार्वती-पुत्र ने प्रसन्न होकर कहा—"हे नत्कीर! तुमने बहुत कष्ट उठाए। मैं तुम्हें एक वर देना चाहता हूँ। तुम जो चाहो माँग लो।"

तब नत्कीर ने कहा—'भगवान! मैं जल्द-से-जल्द इस कोढ़ से छूट जाना चाहता हूँ। कैलास देखे बिना तो मेरा शाप नहीं छूट सकता। वह यहाँ से बहुत दूर है और मैं अपनी बीमारी की वजह से जल्दी जल्दी चल भी नहीं सकता। इसलिए आप ऐसा वर दीजिए जिससे मुझे आसानी से कैलास के दर्शन हो जाएँ।' तब कार्तिकेय ने कहा—"कैलास तो शिवजी का निवास है। इसलिए जहाँ शिवजी हों वहीं कैलास है। आजकल शिवजी दक्षिण के 'कालहस्ती' में रहते हैं। वह पुण्य-क्षेत्र दक्षिण का कैलास भी कहा जाता है। तुम मेरे मयूर पर बैठ जाओ। मैं तुम्हें 'कालहस्ती' में उतार दूँगा। पुण्य-क्षेत्र में पहुँचते ही तुम्हारा कोढ़ दूर हो जायगा।" तब नत्कीर ने उस गुफ़ा में जितने लोग थे सब से विदा ली। कोढ़ी को लेकर कार्तिक का मोर वहाँ से उड़ा और कालहस्ती पहुँचा। कालहस्ती के दर्शन करते ही उसका कोढ़ काफ़ूर हो गया। भला-चंगा होकर उसने अपने रचे श्लोकों से शिव की स्तुति की। उसके ऊपर भोले-बाबा परम प्रसन्न हुए और नत्कीर की कहानी जगत में विख्यात हो गई।

जब ब्रह्मा ने पहले-पहल यह संसार रचा और सब तरह के पशु-पक्षी, जीव-जन्तु आदि बनाए तो उनके कार्य से उनमें से कुछ को बड़ा असन्तोष हुआ। क्योंकि वे जिस तरह का डील-डौल चाहते थे वैसा ब्रह्मा ने उन्हें नहीं दिया था।

पहले भगवान ने ऊँट के लम्बी-लम्बी टाँगें और छोटी सी गरदन दी थी। इसलिए उसे चरने और पानी पीने में बड़ी मुश्किल होती थी। आख़िर तंग आकर ऊँट ने एक गुफ़ा में जाकर आसन जमाया और आँखें मूँद कर घोर तप करने लगा। आख़िर बूढ़े ब्रह्मा का दिल पिघला। एक दिन वे उसके सामने आ खड़े हुए और बोले—'वत्स! तुम्हारे तप से मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ। बोलो, तुम क्या वरदान चाहते हो?' दण्डवत करके ऊँट बोला—'भगवान! आप सर्वान्तर्यामी हैं। क्या आप मेरे मन की बात नहीं जानते हैं? तो भी सुनिए—'मैं अपनी इच्छा कहता हूँ। आपने मेरी देह के सभी अंग बहुत सुडौल बनाए हैं। लेकिन जैसी टाँगें लम्बी हैं, वैसी गरदन भी होती तो मुझे इतनी तक़लीफ़ नहीं उठानी पड़ती। कृपा कर मेरी गर्दन भी लम्बी कर दीजिए।'

'बहुत अच्छा! तुम्हारी गरदन एक कोस लम्बी हो जाएगी।' वर देकर बूढ़े बाबा अन्तर्धान हो गए। उनके जाते ही ऊँट की गरदन बढ़ने लगी और यहाँ तक बढ़ी कि एक कोस दूर जंगल में पहुँच गई और तब जाकर रुकी।

अब ऊँट महराज अपनी गुफ़ा में बैठे बैठे ही एक कोस तक का जंगल साफ़ करने लग गए। दूर तक चारों ओर के सुन्दर पेड़ों की फल-पत्तियाँ सब चट कर लेते और झरनों के मीठे पानी से अपनी प्यास बुझा कर सो जाते। इधर-उधर घूमने की तकलीफ़ से बच कर उनके दिन बहुत मजे में बीतने लगे।

अगर ऊँट इसी तरह सुख से अपने दिन बिताता जाता तो कोई बात न थी। लेकिन ब्रह्मा का वरदान पाकर उसके घमण्ड का ठिकाना न रहा। उसे अब तरह-तरह की शरारतें सूझने लगीं। माँद में शेर को सोता देख वह उसके केसर पकड़ कर खींच लेता। बाघिन के पास सोए बच्चों को उठा कर कहीं दूर रख आता। चौकड़ी भरते हिरनों की गरदन पकड़ कर उठा लेता। डालों पर उछलते बंदरों की पूँछ पकड़ कर नचाता! इस तरह कुछ ही दिनों में उसने सारे जंगल में खलबली मचा दी।

तब सभी जानवर मिल कर ब्रह्मा के पास गए और रो-रो कर अपना दुखड़ा कहने लगे। ब्रह्मा को उन पर तरस आ गया। वे बोले—'अच्छा! जाओ! मैं इसका कोई उपाय करूँगा।' दूसरे दिन जंगल में बड़े ज़ोर का पानी बरसा। ऊँट का शरीर तो गुफ़ा में था। लेकिन उसकी गर्दन तो एक कोस तक फैली थी। वह उसे समेटता भी तो कैसे? कोई उपाय न देख आख़िर उसने अपना सिर एक झाड़ी के अन्दर डाल दिया और चुपचाप लेटा रहा। इतने में क्या हुआ कि एक सियार उस झाड़ी के पास से निकला। ऊँट की गरदन देख उसने समझा कि कोई जानवर मरा पड़ा है। उसने अपने तेज़ दाँतों से उसकी गरदन को नोचना शुरू किया। ऊँट बिलबिलाते हुए अपनी घायल गरदन लेकर फिर बूढ़े बाबा के पास पहुँचा। बहुत गिड़-गिड़ाने पर ब्रह्मा ने उस पर दया की और काट-छाँट कर उसकी गरदन कुछ छोटी कर दी। अब उसकी गरदन न ज्यादा लम्बी रही, न एक दम छोटी ही। तब से उसके उपद्रव कम हो गए और जंगल के जीव सुख से रहने लगे। तुम उसकी जो गरदन आज देखते हो उसी समय की काट-छाँट का फल है। नहीं तो अपनी कोस-भर लंबी गरदन से ऊँट क्या-क्या न करता?
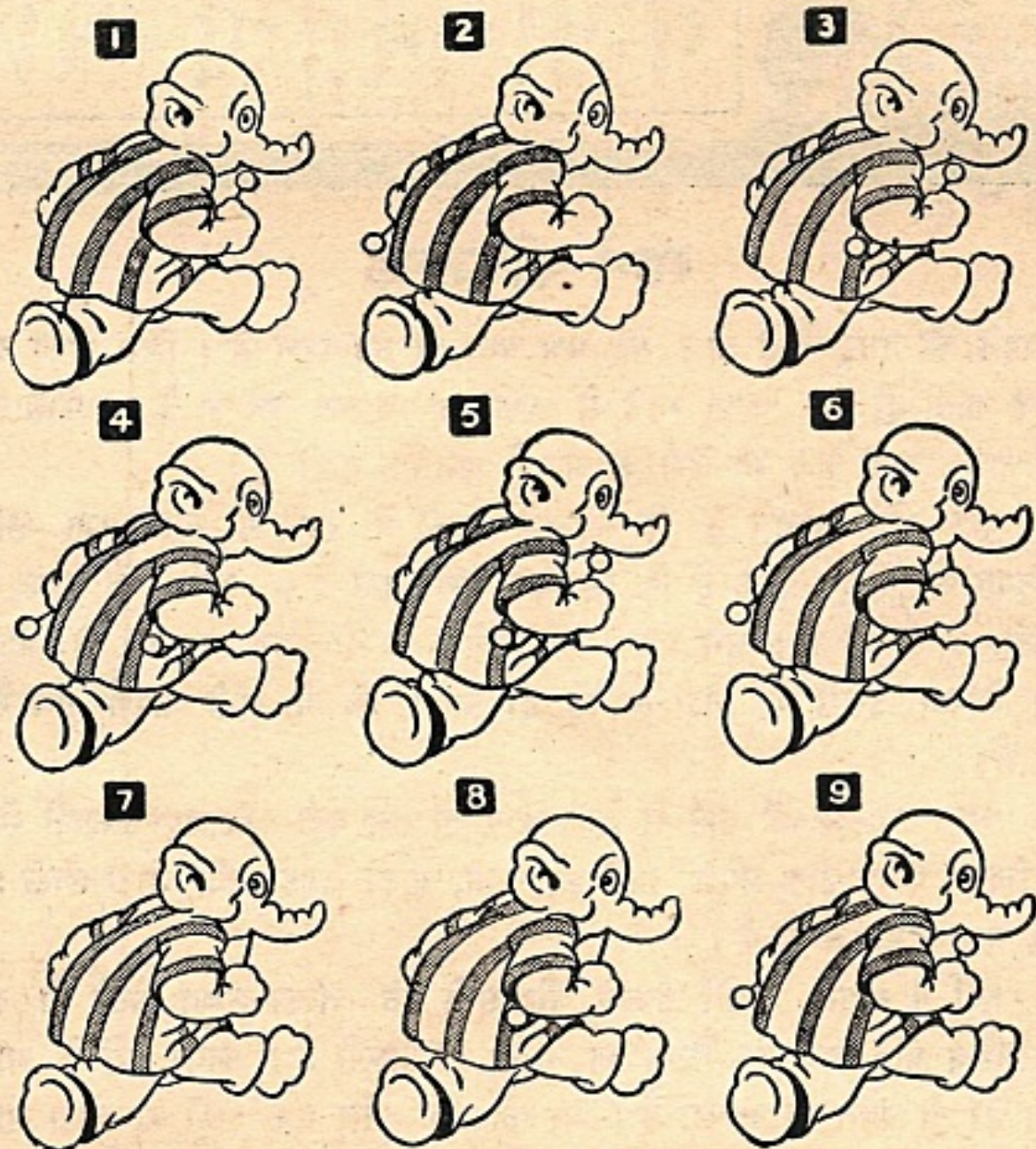
ऊपर के नौ चित्रों में सब एक से दिखाई देते हैं। लेकिन वास्तव में नहीं हैं। उनमें सिर्फ़ दो एक से हैं। बताओ तो देखें, वे दोनों कौन से हैं? अगर न बता सको तो जवाब के लिए ५४-वाँ पृष्ठ देखो!

रहने की जगह

बच्चों के रहने की जगह कैसी हो? यह प्रश्न बड़ा ही महत्वपूर्ण है। जिस जगह हवा और रोशनी खूब आती हो उस जगह रहने से बच्चों का स्वास्थ्य सुधरता है। ऐसी जगहों में रहने वाले बालक आगे चल कर देश के आदर्श नागरिक बनते हैं।

कुछ लोग सोचते हैं कि बड़े-बड़े महलों में रहने में बहुत मज़ा आता है। लेकिन अनुभव से विदित होता है कि यह बात सच्चीं नहीं है। अमीरों के महल देखने में बहुत शानदार हो सकते हैं। उन महलों में रहने वाले भी बहुत ठाट-बाट से जीवन बिता सकते हैं। लेकिन इससे यह नहीं साबित हो जाता कि वे सभी संपूर्ण रूप से स्वस्थ और सुखी हैं।

अगर स्वास्थ्य की दृष्टि से देखा जाए तो उन बड़ी-बड़ी अट्टालिकाओं से, जिनमें हवा और रोशनी बेरोक-टोक प्रवेश नहीं कर पाती, खुली जगहों की छोटी-छोटी झोंपड़ियाँ और कच्चे मकान ही अच्छे हैं।

घरों में नहाने, रसोई पकाने और सोने के अलग-अलग कमरे तो होने ही चाहिए। लेकिन साथ-साथ एक बैठक का होना भी जरूरी है। अगर घरों के आगे थोड़ी खुली जगह हो तो बहुत ही अच्छा है। घर की एक ओर एक बाड़ी या छोटा सा बगीचा हो तो फिर कहना ही क्या? अगर इसके लिए काफी जगह न हो तो कम-से-कम गमलों में छोटे फूल-पौधे लगा सकते हैं। इससे घर की रौनक़ बढ़ती है। तुलसी, काली तुलसी, नींबू के पेड़ों वगैरह से होकर चलने वाली हवा स्वास्थ्य-दायक होती है। वैद्यों का कहना है कि नीम के पेड़ों पर से चलने वाली हवा में भी ऐसे ही गुण होते हैं।

तुम्हारी दीदी

संकेत

बायें से दायें :

१. विघ्नेश्वर
४. एक तरह का साँप
७. जमात
८. दिल
९. मेवाड़ के राजा
११. मित्र
१२. संसार
१३. आग
१४. सवेरा
१६. मकान
१९. तैर
२२. तीर
२३. तरकारी
२४. दुख
२६. पहाड़
२७. सूरज की रोशनी

ऊपर से नीचे :
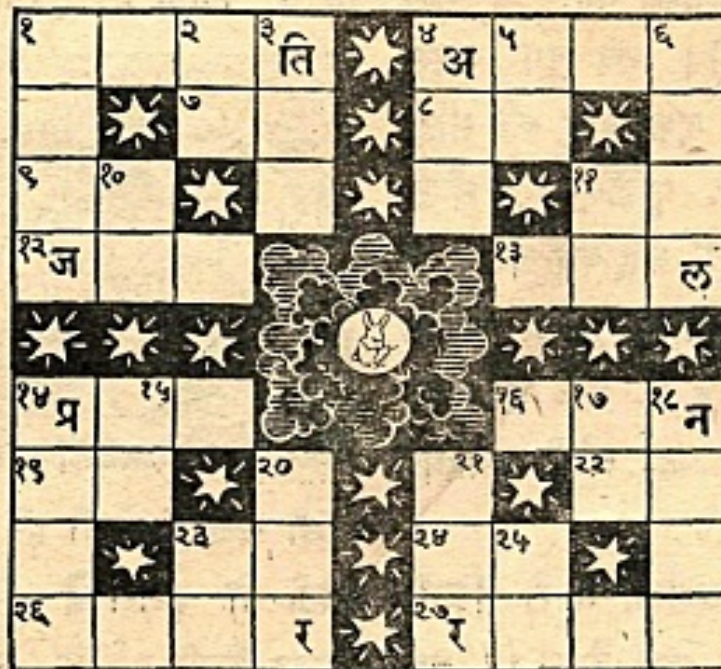
१. हाथियों का राजा
२. पैर
३. टीका
४. देवता
५. लोग
६. पाताल
१०. साँप
११. मछली
१४. बदला
१५. बोझ
१७. काबू
१८. राजा
२०. रास्ता
२१. कम उम्र का
२३. इच्छा
२५. कविता करनेवाला

१		२	३ ति	★	४ अ	५		६
	★	७		★	८		★	
९	१०	★		★		★	११	
१२ ज						१३		ल
★	★	★				★	★	★
१४ प्र	१५					१६	१७	१८ न
१९		★	२०	★	२१	★	२२	
	★	२३		★	२४	२५	★	
२६			र	★	२७ र			

तुम एक छड़ी की छोर से एक मजबूत धागा बाँध कर उससे एक सीटी लटका दो और उसे तमाशा देखने वालों के हाथ में दे दो। वे उसे देख-भाल कर जान लेंगे कि उसमें कुछ भी चालबाजी नहीं है और उसे फिर तुम्हें लौटा देंगे। तब तुम उनसे कहोगे—'सज्जनो! यह एक जादू की सीटी है। आप कोई भी बात पूछिए—यह सीटी अपने आप 'हाँ' या 'नहीं' कह कर जवाब दे देगी। अगर आपका सवाल पूछने लायक़ रहा तो यह सीटी जवाब में एक दो बार बजेगी। अगर नहीं तो यह सीटी लगातार बजती ही रहेगी!'

जैसे समझ लो कि दर्शकों में से किसी ने पूछा —'रविवार को छुट्टी है न?' तब तुम्हारी सीटी जवाब में एक या दो बार बजेगी। क्योंकि सवाल ठीक है। लेकिन समझ लो कि किसी ने पूछा—'मच्छर हाथी से कितना बड़ा है?' तो तुम्हारी सीटी लगातार बजने लगेगी। क्योंकि यह सवाल ऊटपटाँग है।

अब तुम पूछोगे कि यह कैसे सम्भव है? सीटी अपने आप कैसे बजेगी? हाँ, तो इसका रहस्य बताता हूँ; सुनो—छड़ी से लटकने

वाली सीटी बजेगी ही नहीं। बजने वाली सीटी तो दूसरी है। वह तुम्हारे कोट के अन्दर छिपी हुई है। वही दर्शकों के सवालों का जवाब देती है। वास्तव में जादू की सीटी यही है। तुम इसके मुँह से एक रबर की नली लगा दोगे। इस नली के छोर पर

एक रबर का भोंपू होगा। यह जादू की सीटी तुम्हारे कोट की तह में छिपी होगी।

रबर का भोंपू तुम्हारी काँख में दबा होगा। तुम एक हाथ में सीटी लटकती हुई छड़ी पकड़े होगे। सब की नज़र उस तरफ़ होगी। कोई भी तुम्हारी दूसरी काँख में दबे हुए रबर के भोंपू की बात जान न पाएगा। तुम दर्शकों के सवालों के अनुसार उस भोंपू को या तो एक, दो बार या लगातार दबाते
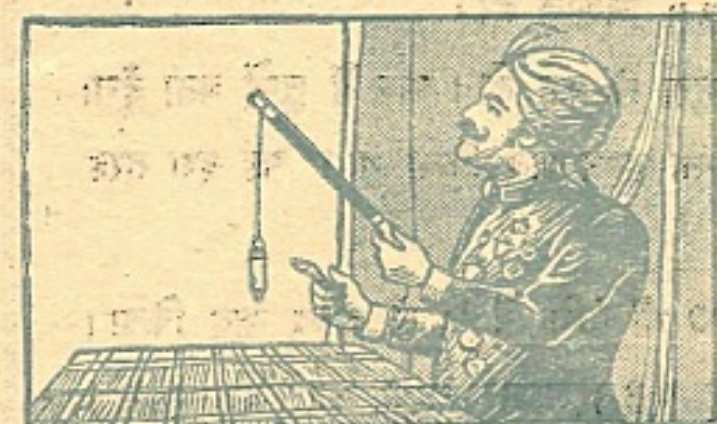
रहोगे। यह जरूरी नहीं है कि रबर की नली बहुत लंबी हो। भोंपू के बदले तुम रबर की गेंद भी काम में ला सकते हो।

[जो प्रोफेसर साहब से पत्र-व्यवहार करना चाहें वे उनको 'चन्दामामा' का उल्लेख करते हुए अंग्रेज़ी में लिखें।

प्रोफेसर पी. सी. सरकार, मेजीशियन
पो. बा. ७८७८ कलकत्ता १२]

प्यासा कौआ

['अशोक' बी. ए.]

*

कहीं प्यास का मारा कौआ
काँव - काँव कर चिल्लाया!
दूर दूर तक ढूँढ़ा उसने
पर, न कहीं जल मिल पाया।

एक जगह पर एक घड़ा था
नीचे था कुछ जल जिसमें!
चोंच डुबाई जब कौए ने
तो चोंच न डूबी उसमें।

पानी कैसे मिलता उसको
अगर घड़े को लुढ़काता?
फोड़ डालता घड़ा अगर, तो
कैसे प्यास बुझा पाता?

बहुत देर तक रहा सोचता
काँव - काँव कर चिल्लाया!
उड़ - उड़, दबा चोंच में अपनी
कङ्कड़ खूब बीन लाया।

एक एक कर डाले घट में,
उठ आया पानी ऊपर!
जी भर प्यास बुझा कर अपनी
चला गया वह सुख में भर।

कठिन काम कोशिश करने पर
सहज सरल हो जाते हैं।
जो सागर में डुबकी लेते
वे ही मोती पाते हैं।

यह हिसाब सीख लो!

तुम कोई एक किताब ले लो। उसमें मनचाहा पृष्ठ खोलो। वह पृष्ठ मुझे न दिखाओ। उस पृष्ठ में पहली दस पंक्तियों के अन्दर, सिली हुई तरफ कोई एक शब्द याद कर लो। अगर तुम मेरे कहे अनुसार करोगे तो मैं तुम्हें यह बता दूँगा कि तुमने किस पृष्ठ में, किस पंक्ति में, कौन सा शब्द याद किया था?

पहले तुम पृष्ठ-संख्या लिख लो। उस संख्या को दुगुना करो। फिर उस संख्या को पाँच से गुणा करो! फिर उसमें २० मिलाओ। इसके बाद उसमें तुम्हारी चुनी हुई पंक्ति की संख्या मिलाओ। फिर उसमें पाँच मिलाओ। कुल मिला कर जितना होगा उसे १० से गुणा करो। फिर उसमें याद किए हुए शब्द की संख्या मिलाओ। इस पूरी संख्या में से २५० निकाल दो।

अन्त में जो संख्या बच रहेगी वह मुझ से कह दो। अब मैं तुम्हें बता दूँगा कि तुमने किस पृष्ठ में, किस पंक्ति में, कौन सा शब्द याद किया था? यह इस तरह किया जाता है—

समझ लो, तुमने ५३ वें पृष्ठ की ७ वीं पंक्ति में ५ वाँ शब्द याद किया।

तुम्हारे चुने हुए पृष्ठ की संख्या है ५३। उसे दुगुना करने से १०६। १०६ को पाँच से गुणा करने पर ५३०। उसमें २० मिलाने से ५५०। इसमें तुम्हारी चुनी हुई पंक्ति की संख्या मिलाने से ५५७। उसमें ५ मिलाने से ५६२। उसे दस से गुणा करने पर ५६२०। उसमें तुम्हारे याद किए हुए शब्द की संख्या मिलाने से ५६२५। इसमें से २५० निकाल देने पर बचा ५३७५। इस संख्या से तुम जान सकते हो कि पृष्ठ संख्या ५३ है। पंक्ति ७ वीं है और शब्द ५ वाँ है। अब तुम समझ गए न कि पृष्ठ, पंक्ति और शब्द की सख्या कैसे बताई जाती है!

★ ★ ★ ★ चित्र-रेखा ★ ★ ★ ★
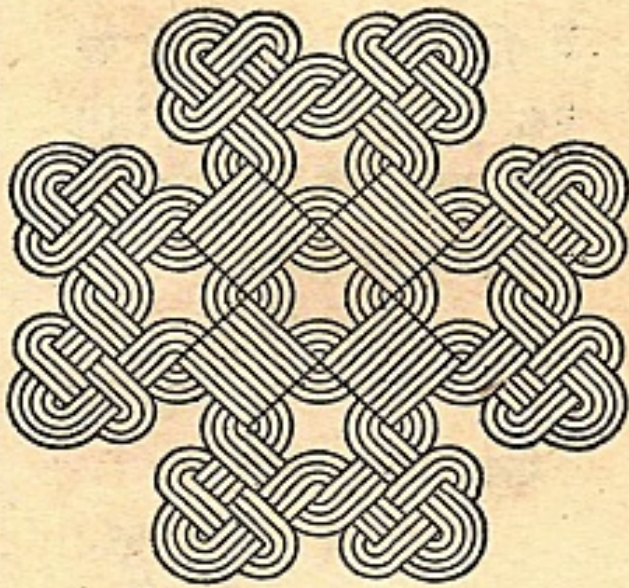
वत्सलाबाई
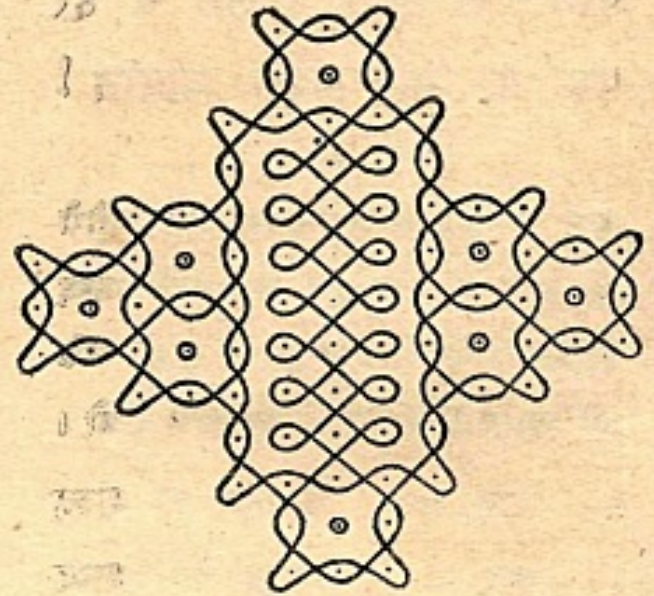
मनोरमा
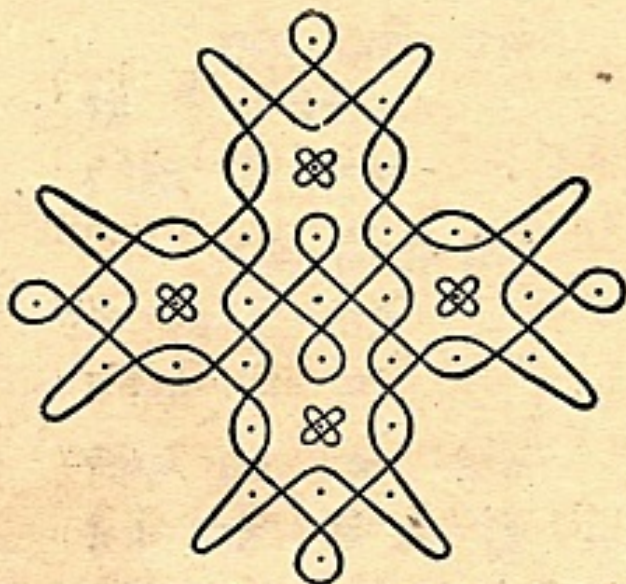
विमला
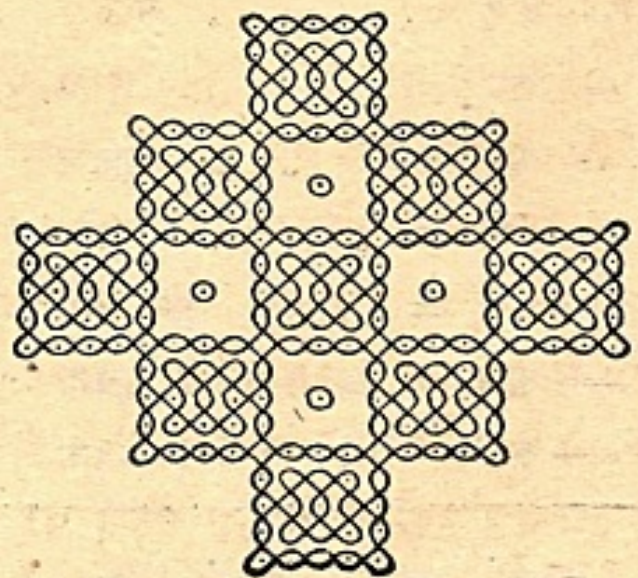
रमोला

सभी कार हैं!

मगर एक अक्षर बदलने से हर एक का माने बदल जाएगा!

*

कार के पहले एक अक्षर रख कर पढ़ोगे तो अन्त में दिए हुए अर्थ-वाले शब्द निकल आएँगे। अगर तुम से न हो सके तो जवाब के लिए उलट कर नीचे देखो।

— कार = . झनझन का शब्द
— कार = . धनुष का शब्द
— कार = . . . डील-डौल
— कार = . . . तरह
— कार = . . . बिगाड़
— कार = . . . सशरीर
— कार = . . . प्रणव
— कार = . . . गुहार
— कार = . . . अहेर
— कार = . . मान लेना
— कार = पेट भरने की सूचना
— कार = साँप का साँस छोड़ना

झंकार; टंकार; आकार; प्रकार; विकार; साकार; ओंकार; पुकार; शिकार; स्वीकार; डकार; फुँकार।

मैं कौन हूँ?

★

मैं पाँच अक्षरों का हिन्दी का एक सुप्रसिद्ध कवि हूँ, जिसे आप सब लोग जानते हैं।

मेरा पहला अक्षर
तुषार में है, पर
बरफ़ में नहीं।

मेरा दूसरा अक्षर
ललाई में है, पर
अरुणिमा में नहीं।

मेरा तीसरा अक्षर
सीकर में है, पर
बूँद में नहीं।

मेरा चौथा अक्षर
दाडिम में है, पर
अनार में नहीं।

मेरा पाँचवाँ अक्षर
समीर में है, पर
वायु में नहीं।

क्या तुम बता सकते हो कि मैं कौन हूँ?

अगर न बता सको तो जवाब ५६-वें पृष्ठ में देखो।

'तुम्हारे हाथ में क्या है?'

'चन्दामामा!'

विनोद-वर्ग

इस वर्ग के पहले अक्षर सभी एक-से हैं और आखिरी अक्षर सभी एक-से। निम्न-लिखित संकेतों की सहायता से इस वर्ग को पूरा करो:

१. ताक़त
२. एक काँटेदार पेड़
३. जङ्गली फूलों का हार
४. समुन्दर की आग
५. बादलों का समूह

अगर न पूरा कर सको तो जवाब ५६-वें पृष्ठ में देखो।
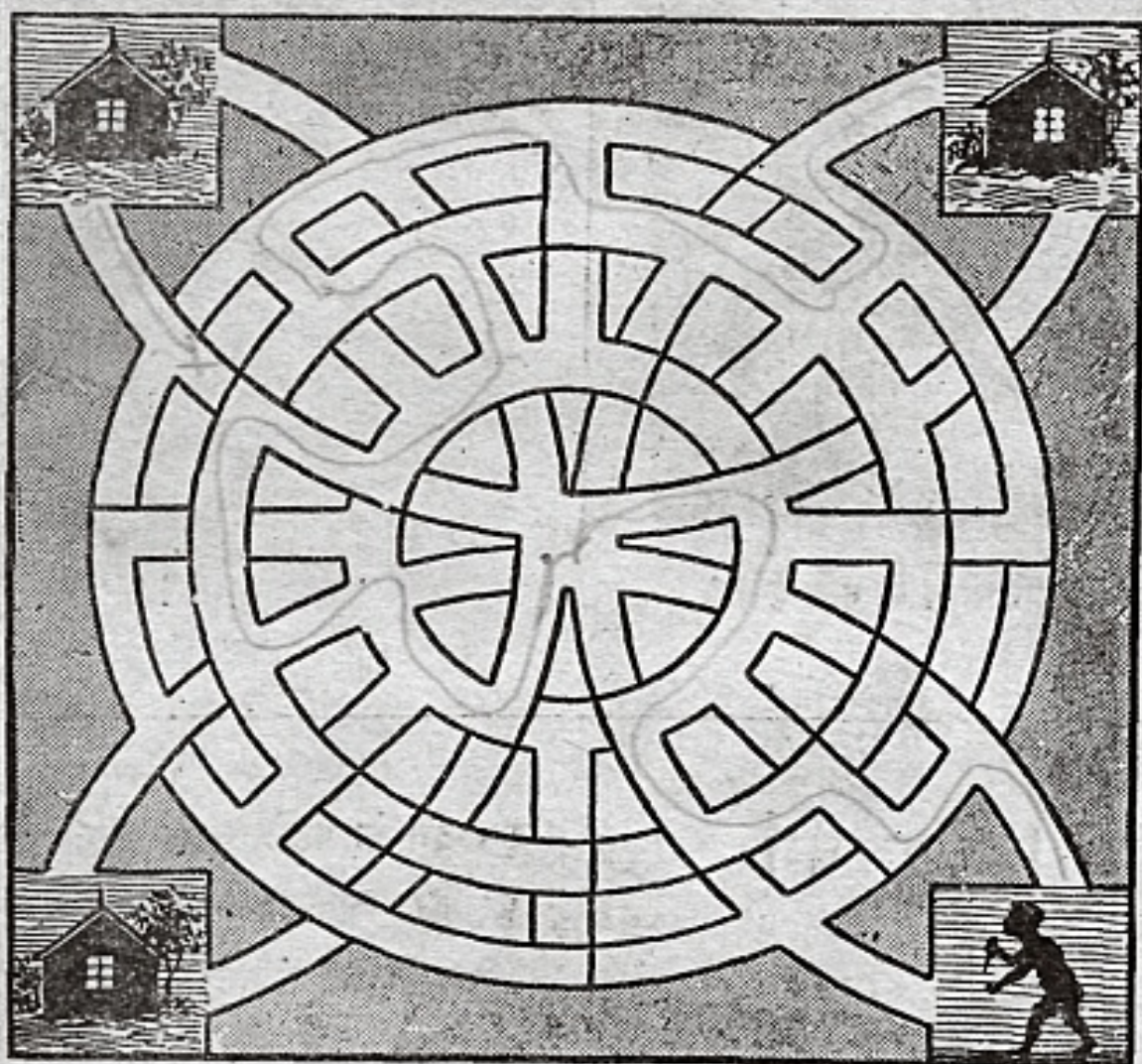
ऊपर के चित्र के एक कोने में एक चोर और बाकी तीन कोनों में तीन घर हैं। चोर ने तीनों घरों में चोरी करने का इरादा किया। मगर अब उसे जान पडता है कि वह केवल एक घर में ही जा सकता है। जरा बताइए तो देखें वह घर कौन सा है जिसमें चोर जा सकता है ?

४५-वें पृष्ठ की नौ चित्रों वाली पहेली का जवाब :

एक और सात नंबर वाले दोनों चित्र एक से हैं।

इस तस्वीर को रंग कर अपने पास रख लेना और अगले महीने के चन्दामामा के पिछले कवर पर के चित्र से इसका मिलान करके देख लेना।

चन्दामामा पहेली का जवाब :

1 ग	ण	2 प	3 ति	★	4 अ	5 ज	ग	6 र
ज	★	7 द	ल	★	8 म	न	★	सा
9 रा	10 ना	★	क	★	र	★	11 मी	त
12 ज	ग	त				13 अ	न	ल
★	★	★				★	★	★
14 प्र	15 भा	त				16 भ	17 व	18 न
19 ति	र	★	20 ड	★	21 कि	★	22 श	र
शो	★	23 मा	ग	★	24 शा	25 क	★	प
26 ध	रा	ध	र	★	27 र	वि	ज्यो	ति

यह चित्र अध्यापकजी का है। बच्चो! देखो, अभी ये हँस रहे हैं न? लेकिन उलट कर देखो तो? बेचारे कितना बिगड़ रहे हैं?
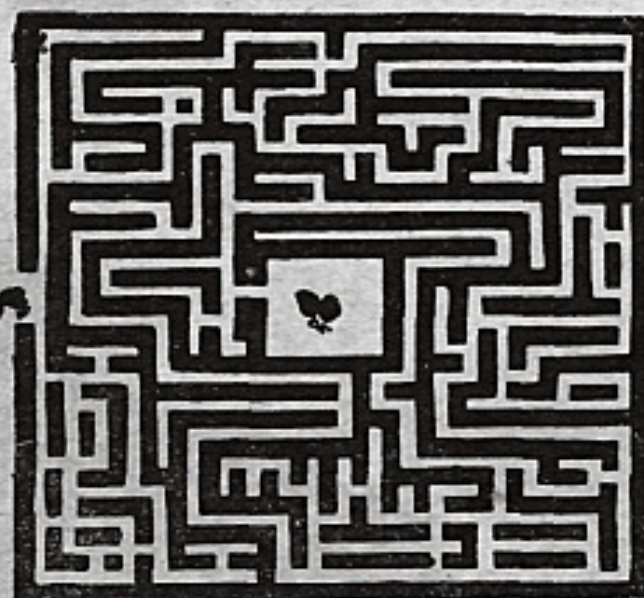
इस वर्ग के बीच दो आम हैं। वहाँ तक पहुँचने की राह बहुत टेढ़ी-मेढ़ी है। एक गिलहरी उन आमों को खाना चाहती है। बच्चो! क्या तुम उसे राह दिखा सकते हो?

विनोद-वर्ग का जवाब :

ब	ल				
ब	बू	ल			
ब	न	मा	ल		
ब	ह	वा	न	ल	
ब	का	ह	क	द	ल

'मैं कौन हूँ' का जवाब :

तुलसीदास

Controlling Editor : SRI CHAKRAPANI
Printed and Published by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press, Madras.

Chandamama August '50 Photo by B. Ranganadham

तारों में चाँद

CHANDAMAMA (Hindi) AUGUST 1950 Regd. No. M. 5452

वन मानुष